पंजीयन क्रमांक : 70269/98
आई एस एस एन : 0972-169X

डाक पंजीयन क्रमांक : डी एल–एस डब्ल्यू–1/4082/18-20
डाक से भेजने की तिथियां : 26-27 अग्रिम माह की
प्रकाशन तिथि : अग्रिम माह की 24 तारीख

ड्रीम 2047

जून 2018 | खण्ड 20 | अंक 9 | 5.00 रुपए

दिनचर्या में पानी की बचत से बड़ा लक्ष्य हासिल हो सकता है

संपादकीय – प्रयोगशाला से आम जन तक विज्ञान पहुंचाना 2

एज्नर हर्ट्जस्प्रंग: तारकीय प्रकार और उनकी ज्योति के बीच संबंध के खोजकर्ता 3

सजीव अणुओं की छवियाँ अब परमाण्विक स्तर पर 6

दिनचर्या में पानी की बचत से बड़ा लक्ष्य हासिल हो सकता है 8

कृत्रिम बुद्धिमत्ता– विश्व का यह तीव्र बदलाव अभूतपूर्व है 11

हमारे गुंजायमान मित्र 13

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की अभिनव उपलब्धियां 16

प्रयोगशाला से आम जन तक विज्ञान पहुंचाना

चंदर मोहन

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग (डीएसटी) के प्रमुख उद्देश्यों में से एक है वैज्ञानिक प्रवृत्ति को बढ़ावा देना और विभिन्न कार्यक्रमों और योजनाओं के जरिए लोगों तक विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी को पहुंचाने के साथ–साथ लोकप्रिय बनाना। डीएसटी अपनी दो शीर्ष एजेंसियों – राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद् (एनसीएसटीसी) और विज्ञान प्रसार के जरिए इस उद्देश्यों को पूरा करती है। डीएसटी द्वारा आरंभ की गई पहलों के आधिक्य के बावजूद, यह अनुभव किया गया कि वैज्ञानिक शोध की उपलब्धियों को ऐसी भाषा और शैली में प्रस्तुत करने की कमी है जिसे एक ऐसा व्यक्ति भी समझ सके जिसकी पृष्ठभूमि विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की न हो। भारत में लोगों में विज्ञान के ज्ञान की इस रिक्तता को दूर करने के लिए, पहली बार, देश में विज्ञान संचार के पारितंत्र को मजबूत बनाने के लिए इन दोनों एजेंसियों ने हाथ मिलाया है। इस पहल का उद्देश्य समाचारपत्रों, पत्रिकाओं, ब्लॉग्स और सोशल मीडिया के जरिए लोकप्रिय विज्ञान लेखन को प्रोत्साहित व सशक्त करना और सहायता देना है और इसे उपयुक्त रूप से ऑगमेंटिंग राइटिंग स्किल्स फॉर आर्टीकुलेटिंग रिसर्च (अवसर) का नाम दिया गया है। *अवसर* में शोधार्थियों को इस प्रकार प्रोत्साहित करने की संकल्पना की गई है: अ) अपने शोध कार्य पर आधारित कम से कम एक लेख जमा करना, ब) उनके बीच विज्ञान संचार/लोकप्रियकरण की प्रवृत्ति का सृजन, पोषण और सशक्तीकरण करना और स) विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्र के तरह तरह के विषयों में उनके द्वारा की गई पहल और आउटपुट को मान्यता देना। विज्ञान प्रसार, एनसीएसटीसी की सलाह से *अवसर* को लागू करेगा और युवा शोधार्थियों को लोकप्रिय विज्ञान लेख लिखने की कला में प्रवीण बनाने के क्रम में क्षमता निर्माण और सहारा देने के लिए हर वर्ष 3–4 कार्यशालाएं आयोजित करने का विचार रखता है। इन कार्यशालाओं में लोकप्रिय विज्ञान लेखन के क्षेत्र में मीडिया एवं पब्लिकेशन हाउस के दिग्गज और इस काम में लगे विख्यात वैज्ञानिक शामिल होंगे।

लेख मुख्यतः विभिन्न मीडिया के जरिये आमंत्रित किए जायेंगे और लक्ष्य होंगे विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की विभिन्न शाखाओं में पी–एच.डी. कर रह रहे छात्र और पोस्ट डॉक्टरल फैलो (पीडीएफ)। विज्ञान संचारकों, वैज्ञानिकों और प्रौद्योगिकीविदों का एक विशेषज्ञ पैनल इन लेखों का विश्लेषण करेगा। *अवसर* लेख को मास मीडिया में प्रकाशित/प्रस्तावित करने के अतिरिक्त एक वर्ष में पी–एच.डी. स्कॉलर्स की 100 बेहतरीन प्रविष्टियों को रु. 10000 की प्रोत्साहन मुद्रा के साथ प्रशंसा प्रमाण पत्र देना सुनिश्चित करता है। इसके साथ इन 100 में से तीन प्रमुख लेखों को क्रमशः रु 1,00,000/–, रु 50,000/– और रु. 25,000/– के नकद पुरस्कार भी दिए जाएंगे। इसके अतिरिक्त, पीडीएफ श्रेणी के प्रतिभागियों द्वारा अपने शोध क्षेत्र से संबंधित जमा किए गए लेखों से चुनी गई 20 प्रविष्टियों में से प्रत्येक को रु 10,000/– का मुद्रा प्रोत्साहन और एक उत्कृष्ट लेख को 1,00,000/– का नकद पुरस्कार मिलेगा।

इस अद्वितीय कार्यक्रम से लोगों को प्रयोगशाला में चल रहे शोध के बारे में रोचक प्रारूप में सूचना मिलेगी इस प्रकार आज प्रयोगशाला और आमजन के बीच मौजूद ये चौड़ा फासला कुछ कम होगा और हमारे शोधार्थियों के लिए विज्ञान पत्रकारिता के क्षेत्र में नए अवसर सृजित होंगे। इसलिए, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी क्षेत्र के हमारे प्रिय शोधार्थियो प्रमुख समाचारपत्रों में प्रविष्टियां आमंत्रित करने के विज्ञापन जारी कर दिए गए हैं और इसे डीएसटी, वीपी और संबंधित एजेंसियों की वेबसाइटों पर भी डाल दिया जाएगा। आइये, इस नयी लहर में शामिल हों और अपने देशवासियों में वैज्ञानिक प्रवृत्ति को मजबूत बनाने में अपना योगदान दें।

जय हिंद!

ई–मेल: chander.m@nic.in
(अनुवाद: डॉ. विनीता सिंघल)

संपादक	:	चंदर मोहन
संयुक्त संपादक	:	रिन्टू नाथ
प्रॉडक्शन	:	मनीष मोहन गोरे एवं प्रदीप कुमार
भाषा संपादन	:	रघुबर दत्त रिखाड़ी
पत्र व्यवहार का पता	:	विज्ञान प्रसार, सी-24, कुतुब इंस्टीट्यूशनल एरिया, नई दिल्ली-110 016 दूरभाष : 011-26967532; फैक्स : 0120-2404437 ई-मेल : rnath07@gmail.com वेबसाइट : http://www.vigyanprasar.gov.in

''ड्रीम 2047'' में प्रकाशित लेखों/प्रलेखों में व्यक्त लेखकों के कथनों, मतों व सुझावों के लिए विज्ञान प्रसार किसी भी रूप में उत्तरदाई नहीं है।

''ड्रीम 2047'' में प्रकाशित लेखों के अंश, सौजन्य/साभार के साथ पुनर्प्रकाशित/उद्धृत किए जा सकते हैं बशर्ते वे पत्र-पत्रिकाएं निःशुल्क वितरित की जा रही हों जिनमें पुनर्प्रकाशन किया जा रहा है।

विज्ञान प्रसार के लिए मनीष मोहन गोरे द्वारा सी-24, कुतुब इंस्टीट्यूशनल एरिया, नई दिल्ली-110 016 से प्रकाशित तथा उन्हीं की ओर से अरावली प्रिंटर्स एंड पब्लिशर्स, प्रा. लि., ओखला औद्योगिकी क्षेत्र, फेस-II, नई दिल्ली-110 020 द्वारा मुद्रित। फोन : 011-26388830-32

एज्नर हर्ट्जस्प्रंग

तारकीय प्रकार और उनकी ज्योति के बीच संबंध के खोजकर्ता

सुबोध महंती

एज्नर हर्ट्जस्प्रंग ने खगोलिकी में कोई औपचारिक शिक्षा ग्रहण नहीं की थी, फिर भी अपनी लगन के बल पर वे बीसवीं सदी के महत्वपूर्ण खगोलविद् बन गए थे। किसी सुदूर तारे की तुलना में एक नजदीकी मद्धम प्रकाशित तारा अधिक चमकदार लग सकता है, इस तथ्य का प्रेक्षण करके उन्होंने 'निरपेक्ष चमक' की संकल्पना प्रस्तुत की। वह इस प्रतीति की असंगति को लेकर कुछ हैरान हुए थे और इस असंगति को दूर करने के लिए उन्होंने तारे के 'निरपेक्ष क्रांतिमान' या 'वास्तविक चमक' की संकल्पना को प्रस्तावित किया, बजाय प्रतीत होती इसकी चमक के।

"हर्ट्जस्प्रंग यह महसूस करने वाले पहले व्यक्ति थे कि तारों के वर्णक्रम संबंधी रंग (एंटोनिया माओरी के द्वारा परिभाषित और वर्गीकृत) और उनकी चमक के बीच एक संबंध होता है।"

दी कैंब्रिज डिक्शनरी ऑफ साइंटिस्ट्स (2003)

"तारकीय एवं आकाशगंगा संबंधी दूरियों के निर्धारण के लिए एक विधि का विकास करना हर्ट्जस्प्रंग की एक अन्य मुख्य उपलब्धि रही है।"

ए डिक्शनरी ऑफ साइंटिस्ट्स, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस (1999)

"1905 में उन्होंने (हर्ट्जस्प्रंग ने) यह प्रदर्शित किया था कि कैसे किसी तारे की चमक उसके वर्ण क्रम में रेखाओं की चौड़ाई से संबंधित होती है और इस तरह उन्होंने स्पेक्ट्रोस्कोपिक पैरलैक्स की स्थापना दूरी का पता लगाने के एक जरिए के तौर पर की। उन्होंने रेड जायेंट और बौने तारों के बीच भेद को अवकलित किया। हर्ट्जस्प्रंग ने निरपेक्ष कांतिमान की आधुनिक परिभाषा को भी प्रस्तावित किया। सन 1906 में उन्होंने प्लेइआडीस तारों के संबंध में पहला हर्ट्जस्प्रंग–रसेल आरेख चित्रित किया था।"

ए डिक्शनरी ऑफ एस्ट्रोनामी, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस (1997)

एज्नर हर्ट्जस्प्रंग ने खगोलिकी में कोई औपचारिक शिक्षा ग्रहण नहीं की थी, फिर भी अपनी लगन के बल पर वे बीसवीं सदी के महत्वपूर्ण खगोलविद बन गए थे। वे अधिकांशतः हर्ट्जस्प्रंग-रसेल आरेख या एच-आर आरेख के लिए जाने जाते हैं। इस आरेख या ग्राफ को खगोल भौतिकी के क्षेत्र में सर्वाधिक उपयोगी और समक्ष प्लाटों में से एक माना जाता है। यह एक ग्राफ है जिस पर तारों की चमक के मापन को आम तौर पर उनके निरपेक्ष कांतिमान की, उनके तापमान के मापन (या तो वर्ण क्रम स्वरूप वाले या रंजक सूचकांक) के सापेक्ष प्लॉट किया जाता है। हर्ट्जस्प्रंग-रसेल आरेख ने तारकीय विकास के अध्ययन की दिशा में आधारभूत भूमिका निभाई।

एज्नर हर्ट्जस्प्रंग

हर्ट्जस्प्रंग-रसेल आरेख ने मूल रूप से बौने या मुख्य अनुक्रम तारों (हमारे तारे सूर्य के समान जो कि एक पीला बौना तारा है) और विशालकाय तारों (सैकड़ों गुना बड़े) जैसे तारों के दो प्रकारों की ओर संकेत किया था, जिसके बाद आगे चलकर ग्रह आकार के श्वेत बौनों और अति विशाल सुपर तारों की खोज की गई। हर्ट्जस्प्रंग और एक अमेरिकी खगोलविद् हेनरी नोरिस रसेल (1877-1957) ने स्वतंत्र रूप से सतह के तापमान के सापेक्ष तारकीय चमक के लघुगणकीय ग्राफों को प्लॉट किया। यह आरेख प्रदर्शित करता है कि कैसे तारों की चमक और उनके तापमान परस्पर संबंधित होते हैं। हर्ट्जस्प्रंग आरेख में मुख्य अनुक्रम के शीर्ष, जिसमें बहुत सारे धुंधले तारे हैं, तथा विशाल तारकीय श्रृंखला, जहां अति उद्दीप किंतु संख्या में बहुत कम तारे हैं, के बीच के क्षेत्र को हर्ट्जस्प्रंग अन्तराल कहा जाता है। यहां कोई तारे नहीं होते हैं।

डॉ. सुबोध महंती, विज्ञान प्रसार में वैज्ञानिक 'जी' के पद से सेवानिवृत हुए हैं। सी –12, निवेदिता कुंज, सेक्टर –10, आर के पुरम, नई दिल्ली। ईमेलः subodhmahanti@gmail.com

एक नजदीकी मद्धम प्रकाशित तारा किसी सुदूर चमकीले तारे से अधिक प्रकाशमान हो सकता है, इस तथ्य का अवलोकन करके हर्ट्जस्प्रंग के मन में 'निपरेक्ष चमक' का विचार उत्पन्न हुआ था। इस प्रतीति की असंगति को लेकर वे कुछ विचलित भी हुए थे। इस असंगति की व्याख्या करने के लिए उन्होंने तारे के 'निरपेक्ष कांतिमान' या वास्तविक चमक की संकल्पना प्रस्तावित की, बजाय तारे की प्रतीत होती चमक के प्रेक्षक के द्वारा आम तौर पर समझी जाने वाली तारे की चमक वास्तव में तारे की प्रतीत होती चमक होती है। तारों की चमक की तुलना के लिए उन्होंने एक प्रणाली का प्रस्ताव रखा जिसमें उन्होंने कल्पना की कि सभी तारे प्रेक्षक से 10 पारसेक (पारसेक तारकीय दूरी की एक मूल इकाई है, जो वृत्तांश के एक सेकंड के त्रिकोणमितीय लंबन के संगत होती है) की समान दूरी पर थे।

हेनरी नोरिस रसेल

हर्ट्जस्प्रंग ने तारों की वास्तविक गतियों का मापन किया – प्रेक्षक की दृष्टि रेखा के अभिलंब दिशा में उनकी कोणीय गतियां तारा समूहों की सदस्यता को प्रमाणित करने के लिए उन्होंने इस तरह प्राप्त नतीजों का प्रयोग किया। तारकीय और आकाशगंगा संबंधी दूरियों के निर्धारण के लिए एक विधि का विकास किया। पूर्व में दो जर्मन खगोलविदों फ्रेडरिक विल्हेल्म बेसल (1784-1846) और फ्रेडरिक जार्ज विल्हेल्म वान स्ट्रुव (1793-1864) ने तारकीय दूरियों की गणना हेतु वार्षिक लंबन के मापनों का उपयोग किया। हालांकि उनकी यह विधि लगभग केवल एक सौ प्रकाश वर्ष तक के लिए ही सटीक थी। एक अमेरिकी खगोलविद हेनरीएटा स्वान लेविट (1868-1928) ने यह बताया कि सिफिड चर के नाम से पहचाने जाने वाले एक तारा समूह की प्रकाश भिन्नता अवधि उनकी माध्य चमक से संबद्ध थी। हर्ट्जस्प्रंग की यह दलील थी कि सिफिड की अवधि और चमक के प्रेक्षण द्वारा सिफिड से युक्त तारों के किसी भी समूह की दूरी के मापन में सिफिड का प्रयोग किया जा सकता है। उन्होंने लघु (या उससे भी न्यून) मैगेलानिक क्लाउड की दूरी का मापन किया, जो कि मौजूदा मान से कम है, परंतु किसी आकाशगंगा से परे की दूरी का पहला मापन था। लघु मैगेलानिक क्लाउड (एसएमसी) हमारी आकाशगंगा (मिल्की वे) के साथ वाली दो अनियमित आकाशगंगाओं में से छोटी वाली है। इसे नुबेकुला माइनर के नाम से भी जाना जाता है, और यह करीब 9000 प्रकाश वर्ष चौड़ी और 190000 प्रकाश वर्ष दूर है। हर्ट्जस्प्रंग और लिविट के कार्यों ने अमेरिकी खगोलविद हारलो शाप्ले (1885-1972) को हमारी आकाशगंगा की समुचित आकृति का पता लगाने के लिए प्रेरित किया।

फ्रेडरिक विल्हेल्म बेसेल

सन 1922 में हर्ट्जस्प्रंग ने 734 तारों के समकक्ष माध्य रंगों का एक कैटेलॉग तैयार किया। इस कैटेलॉग में उन्होंने विश्वसनीय लंबनों की कमी के चलने, समुचित गातियों की दूरी का संकेतक मानते हुए तारों के रंगों और प्रदीप्ति के मध्य संबंध पर चर्चा की। उन्होंने दो क्षुद्रग्रहों – 1627 आइवर (25 सितंबर 1929) और 1702 कालाहारी (7 जुलाई 1924) को भी खोजा।

एज्नर हर्ट्जस्प्रंग का जन्म 8 अक्टूबर 1873 को डेनमार्क में कोपेनहेगन के निकट फ्रेडरिक्सबर्ग में हुआ था। उनके पिता सेवरिन हर्ट्जस्प्रंग कोपेनहेगन विश्वविद्यालय से खगोलिकी में परास्नातक थे और उन्हें इस विषय में शोध के लिए स्वर्ण पदक प्राप्त हुआ था। खगोलिकी के अध्ययन में बेहतर वित्तीय संभावनाओं के अभाव में उन्होंने डेनमार्क सरकार के वित्त विभाग में नौकरी कर ली और बहुत युवावस्था में वे राज्य जीवन बीमा कंपनी के निदेशक नियुक्त किए गए। हर्ट्जस्प्रंग के पिता ने अपने बेटे के मन में खगोलिकी और गणित के प्रति गहरी रुचि बिठा दी। वह नहीं चाहते थे कि उनका बेटा खगोलिकी या गणित का अध्ययन करे क्योंकि इन विषयों से जुड़े कैरियर में वित्तीय संभावनाएं कम थीं। इसलिए उन्होंने यह तय किया कि उनके बेटे को अधिक व्यावहारिक शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए। इस लिहाज से हर्ट्जस्प्रंग ने रसायन विज्ञान का अध्ययन किया। प्रसिद्ध डेनमार्कवासी रसायनशास्त्री हैंस पीटर जोर्गन जूलिअस थामसन (1826-1909) द्वारा लिखित एक छोटी पुस्तक को पढ़ने के बाद उनकी रुचि रसायन विज्ञान में बढ़ गई। जब हर्ट्जस्प्रंग के पिता का निधन हुआ तब उनकी उम्र मात्र 20 वर्ष थी। यहां पर एक ध्यान देने वाली बात यह है कि उनके पिता की खगोलिकी विषय से संबंधित पुस्तकों के संग्रह को बेच दिया गया था केवल इसलिए कि उनके परिवार में किसी भी व्यक्ति की रुचि खगोलिकी में नहीं थी। हर्ट्जस्प्रंग ने कोपेनहेगन के एक मेट्रोपोलिटन स्कूल में स्कूली शिक्षा पूरी करने के बाद 1898 में पालिटेक्निक इंस्टीट्यूट (कोपेनहेगन) से रासायनिक अभियांत्रिकी में स्नातक उपाधि प्राप्त की और उसके बाद उन्होंने सेंट पीटर्सबर्ग (जिसे बाद में चलकर लेनिनग्राड कहा गया और फिर दोबारा पुराने नाम से पुकारा जाने लगा) में रसायनशास्त्री के रूप में कार्य किया। जर्मन रसायनशास्त्री फ्रेडरिक विल्हेल्म ओस्टवाल्ड (1853-1932) के मार्गदर्शन में लिपजिग में उन्होंने प्रकाश रसायनशास्त्र का अध्ययन किया।

फ्रेडरिक जार्ज विल्हेल्म वान स्ट्रुव

सन 1902 में मां के निधन के बाद हर्ट्जस्प्रंग डेनमार्क लौट आए और वहां निजी तौर पर छोटी आमदनी के साथ रहे। कोपेनहेगन यूनिवर्सिटी वेधशाला और यूरेनिया वेधशाला, फ्रेडेरिक्सबर्ग में एक शौकिया खगोलविद के तौर पर उन्होंने कार्य आरंभ कर दिया। बीसवीं सदी के आरंभ में जब हर्ट्जस्प्रंग ने खगोलिकी के क्षेत्र में कार्य करना शुरू किया, तारों की भौतिक प्रकृति का अध्ययन अपनी शैशवावस्था में ही था। उन्नीसवीं सदी में, तारकीय खगोलिकी का मुद्दा तारों की स्थितियों और गतियों को सुनिश्चित करना था। उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध तक इटली के खगोलविद और पादरी आगिओलो सेच्ची (1818-1878) और अंग्रेज शौकिया खगोलविद एवं वर्णक्रम वैज्ञानिक विलियम हगिंस (1824-1910) ने वर्णक्रम विज्ञान के क्षेत्र में अपने आरंभिक शोध कार्य शुरू कर दिए थे। सेच्ची ब्रिटिश खगोलविद व रसायनशास्त्री वारेन डे ला रुए (1815-1889) और अमेरिकी खगोलविद विलियम क्रैंच बांड (1789-1859) ने तारकीय वर्णक्रम के अध्ययन के लिए छायाचित्रण की नई तकनीक प्रस्तुत की। हार्वर्ड कालेज वेधशाला ने 1890 से 1901 के दौरान छायाचित्रण के तौर पर सुनिर्धारित तारकीय वर्णक्रम के तीन कैटलाग प्रकाशित किए। हर्ट्जस्प्रंग ने तारों के रंगीन छायाचित्रण का मापन शुरू किया। चूंकि वे प्रकाश रसायनिकी में प्रशिक्षित थे इसलिए छायाचित्रण तकनीक के इस्तेमाल द्वारा खगोलिकीय प्रेक्षण करने में वे उपयुक्त थे।

हेनरीएटा स्वान लिविट

सन 1905 में प्रकाश भौतिकी और प्रकाश रसायनिकी को समर्पित शोध जर्नल जिट्सक्रिफ्ट फर विसेन्सकाफ्ल्सके फोटोग्रेफिया (वैज्ञानिक छायाचित्रण की पत्रिका) में हर्ट्जस्प्रंग ने अपने शोध नतीजों

को "जुर स्ट्राह्लंग डेर स्टर्न" (तारों के विकिरण) शीर्षक शोध पत्र में प्रकाशित किया। इसके बाद वर्ष 1907 में उसी शोध जर्नल में उनका एक और शोध पत्र प्रकाशित हुआ जिसका शीर्षक था "जुर बेस्तिमुंग डेर फोटोग्रैफीशेन स्टर्नग्रोसेन" (छायाचित्रण संबंधी तारा आकारों का निर्धारण)।

हारलो शाप्ले

हर्ट्जस्प्रंग के द्वारा प्राप्त किए गए कुछ निष्कर्ष इस प्रकार थे:

- वर्णक्रम वर्गों जी के एम में तारों को भिन्न प्रदीप्ति युक्त दो श्रेणियों में समूहित किया जा सकता है।
- प्रदिप्त लाल दिखने वाले तारे बड़े होने चाहिए।
- तारों के वर्णक्रम और तारों की उनकी चमक के बीच एक संबंध होता है।

उपरोक्त शोध पत्रों में इस आरेख को शामिल नहीं किया गया था, जो अब हर्ट्जस्प्रंग-रसेल आरेख के नाम से जाना जाता है। ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि शायद हर्ट्जस्प्रंग ने नहीं सोचा कि उनके पास उस समय पर्याप्त आंकड़ा था। 1911 में उन्होंने प्लियाडेस (टॉरस में एक प्रमुख खुला क्लस्टर, जिसे लोकप्रिय रूप से सात बहनों के रूप में जाना जाता है और यह आकाश में 1.5° से अधिक क्षेत्र में फैला हुआ है) और हाइडेस (टारस में एक बड़ा V आकार का खुला क्लस्टर, जो आकाश में 5° से अधिक क्षेत्र में फैला हुआ है), के रंग-परिमाण चित्रों को प्रकाशित किया, इस प्रकार का पहला चित्र, यहां पर उल्लेख किया जा सकता है कि इस तरह के आरेख का अस्तित्व अधिकतर अज्ञात ही रहा जब तक कि एच. एन. रसेल ने 1913 में रॉयल एस्ट्रोनॉमिकल सोसाइटी की एक बैठक में स्वतंत्र रूप से अपने द्वारा विकसित एक आरेख प्रस्तुत नहीं कर दिया। रसेल, हर्ट्जस्प्रंग के पहले के शोध कार्यों से अनभिज्ञ थे। खगोलविदों ने हर्ट्जस्प्रंग के कार्यों को अनदेखा किया, क्योंकि हर्ट्जस्प्रंग के शोध कार्य वैज्ञानिक फोटोग्राफी के एक शोध जर्नल में प्रकाशित हुए थे न कि नियमित खगोलिकी के शोध जर्नल में।

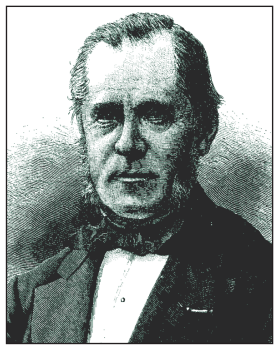

हैंस पीटर जोर्गेन जूलियस थामसन

हर्ट्जस्प्रंग द्वारा प्रकाशित पहले दो शोध पत्रों ने एक प्रमुख जर्मन खगोलविद और गॉटिंगेन वेधशाला के निदेशक कार्ल श्वार्जस्चिल्ड (1873-1916) को इतना प्रभावित किया कि उन्होंने हर्ट्जस्प्रंग को 1909 में गॉटिंगेन वेधशाला में आने का निमंत्रण भी दिया और कुछ महीनों के भीतर उन्हें वहां पर एसोसिएट प्रोफेसर नियुक्त किया गया। जब श्वार्जस्चिल्ड निदेशक बनकर पॉट्सडैम एस्ट्रोफिजिकल वेधशाला गए, तो हर्ट्जस्प्रंग भी वहां उनके साथ चले गए, जहां उन्हें वरिष्ठ स्टाफ खगोलविद नियुक्त किया गया। दरअसल श्वार्जस्चिल्ड ने इस शर्त पर उस पद को स्वीकार किया था कि हर्ट्जस्प्रंग उनके साथ जाएंगे। हालांकि, श्वार्जस्चिल्ड के साथ हर्टजस्प्रंग का सानिध्य लंबे समय तक नहीं रहा। 1916 में प्रथम विश्व युद्ध में पूर्वी मोर्चे पर अपनी सैन्य सेवा के दौरान गंभीर बीमारी के कारण श्वार्जस्चिल्ड की मौत हो गई।

हर्ट्जस्प्रंग ने नीदरलैंड की यूनिवर्सिटी ऑब्जरवेटरी ऑफ लीडेन के एसोसिएट डाइरेक्टर पद पर अपनी सेवाएं देने के लिए 1919 में डेनमार्क छोड़ दिया। वे 1935 में यूनिवर्सिटी ऑब्जरवेटरी ऑफ लीडेन के निदेशक के रूप में हालैंड के गणितज्ञ और खगोलविद विलेम्डे सिटर (1872-1934) के उत्तराधिकारी बने। लीडेन में उनके छात्रों में डच-अमेरिकी खगोलविद जेरार्ड पीटर क्यूपर (1905-1973) थे, जिन्होंने पहली बार क्यूपर बेल्ट के अस्तित्व को अल्पकालिक धूमकेतु के स्रोत के रूप में सुझाया दिया था। 1944 में, लीडेन विश्वविद्यालय से सेवानिवृत्ति के बाद हर्ट्जस्प्रंग डेनमार्क लौट आए और ब्रोफेल्डे में नवस्थापित विश्वविद्यालय वेधशाला के पास बस गए जहां वह सक्रिय रूप से 1966 तक खगोलीय अनुसंधान में सक्रियता के साथ अपनी सेवाएं देते रहे।

1929 में, हर्ट्जस्प्रंग को रॉयल एस्ट्रोनॉमिकल सोसाइटी, लंदन द्वारा छोटे (या कमतर) मैगेलैनिक क्लाउड की दूरी के निर्धारण के लिए और खगोल विज्ञान में अन्य अग्रणी कार्यों हेतु स्वर्ण पदक से सम्मानित किया गया था। रॉयल एस्ट्रोनॉमिकल सोसाइटी का स्वर्ण पदक इसका सर्वोच्च पुरस्कार होता है। उन्हें 1973 में एस्ट्रोनॉमिकल सोसाइटी ऑफ द पैसिफिक से ब्रूस पदक भी मिला। 1929 में कोपेनहेगन नगर की ओर से ओले रोएमर पदक से उन्हें सम्मानित किया गया था। वे यूरोप और अमेरीका के कुल मिलाकर 10 से अधिक अकादमियों के सदस्य थे।

फ्रेडरिक विल्हेल्म ओस्टवाल्ड

21 अक्टूबर 1967 को रोजकिल्डे, डेनमार्क में हर्ट्जस्प्रंग की मृत्यु हुई। तब उनकी उम्र 94 वर्ष थी। अमेरिकी नौसेना वेधशाला पुस्तकालय को उनके 12153 पृष्ठों के कुल शोध पत्र (मूल पांडुलिपियों सहित) प्रदान कर दिए गए, जहां पर हर्ट्जस्प्रंग के पूर्व छात्र के.ए.ए. स्ट्रैंड निदेशक के पद पर कार्यरत थे। एक चंद्र क्रेटर और एक मुख्य पट्टी के क्षुद्रग्रह का नाम (1693 हर्ट्जस्प्रंग) उनके नाम पर रखा गया यह मशहूर है कि हर्ट्जस्प्रंग अक्सर अपने सहयोगियों और छात्रों से कहा करते थे, "यदि कोई कड़ी मेहनत करता है, तो उसे हमेशा कुछ न कुछ मिलता है और कभी-कभी उसमें से कुछ बहुत महत्वपूर्ण भी होता है।"

संदर्भ

1. अ डिक्शनरी आफ एस्ट्रोनामी, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1997
2. अ डिक्शनरी आफ साइंटिस्ट्स, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1999
3. हिल्ब्रान, जे. एल. (संपा.), दी ऑक्सफोर्ड कंपेनियन टू दी हिस्ट्री ऑफ मॉडर्न साइंस, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 2003
4. ल्युश्नर, अमिन ओ., "दी अवार्ड आफ गोल्ड मेडल टू प्रोफेसर एज्नर हर्ट्जस्प्रंग", एस्ट्रोनामिकल सोसाइटी ऑफ दी पेसिफिक के प्रकाशन, खंड 49, क्रमांक 288, पृष्ठ 65-81, 1937 (इंटरनेट पर उपलब्ध, नासा खगोल भौतिकी डाटा सिस्टम द्वारा प्रदत्त)
5. स्पांगेनबर्ग, रे एवं डिआने के. मोजर, दी हिस्ट्री ऑफ साइंस फ्रॉम 1895 टू 1945, हैदराबाद: यूनिवर्सिटीज प्रेस (इंडिया) लिमिटेड, 1999
6. स्ट्रैंड, के.ए.ए., एज्नर हर्ट्जस्प्रंग, 1873-1917, एस्ट्रोनामिक्ल सोसाइटी ऑफ दी पेसिफिक, के प्रकाशन, खंड 80, क्रमांक 472, पृष्ठ 51-56, 1968 (इंटरनेट पर उपलब्ध, नासा खगोल भौतिकी डाटा सिस्टम द्वारा प्रदत्त)
7. दी कैंब्रिज डिक्शनरी ऑफ साइंटिस्ट्स (द्वितीय संस्करण), कैंब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, 2003
8. इंटरनेट पर उपलब्ध स्रोत।

(यह आलेख मौजूदा साहित्य में उपलब्ध एज्नर हर्ट्जस्प्रंग के जीवन और कार्य के महत्वपूर्ण बिंदुओं की एक लोकप्रिय प्रस्तुति है। विचार यह है कि युवा पीढ़ी को हर्ट्जस्प्रंग के बारे में और जानने के लिए प्रोत्साहित किया जाए। लेखक ने इस आलेख को लिखने हेतु पढ़े गए स्रोतों का उल्लेख किया है। लेखक उन सभी लेखकों का आभारी है जिनके कार्यों ने इस आलेख में योगदान दिया है।)

(अनुवादः जनमेजय मणि त्रिपाठी) ■

सजीव अणुओं की छवियाँ अब परमाण्विक स्तर पर

बिमान बसु

स्विट्जरलैंड के लॉजेन विश्वविद्यालय के जेक्स ड्यूबोशे, न्यूयॉर्क, अमेरिका में कोलंबिया विश्वविद्यालय के जोचिम फ्रैंक और कैम्ब्रिज, यू.के. में आणविक जीवविज्ञान की एम.आर.सी. प्रयोगशाला के रिचर्ड हैण्डर्सन को वर्ष 2017 के लिए रसायन विज्ञान के क्षेत्र में नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया। इन तीन पुरस्कार विजेताओं के काम ने जैव–रसायन में अनुसंधान के नए मार्ग खोले हैं। शोधकर्ताओं को जीवित प्रणालियों के अणुओं को बारीकी से देखने का एक अनूठा साधन दिया है। यह पद्धति जैव रसायन को एक नए युग में लाई है जो जैव अणुओं की विस्तृत छवियों को कैद करना पहले से आसान बनाती है।

1930 के दशक की शुरुआत में जब से इस पद्धति का आविष्कार किया गया था, तब से इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोप के आविष्कार के बाद पिछले दशकों में इसके वियोजन (रिजॉल्यूशन) में पिछले दशकों में मूल रूप से सुधार हुआ है; प्रोटीन जो पहले आकारहीन गुच्छों के जैसे दिखते थे अब यह उनको परमाणु वियोजन के स्तर पर दृश्य बनाने में सक्षम हो रहा है। इसके आविष्कार के बाद से, इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोप ही कोशिकाओं को देखने और हमारे जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाली सूक्ष्म इकाइयों जैसे वायरस के निरीक्षण का एकमात्र तरीका था। चूंकि इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोप की प्रभावशाली बीम जैविक सामग्री को नष्ट कर सकती है, इसलिए ऐसा माना जाता था कि ऐसे सूक्ष्मदर्शी केवल मृत कोशिकाओं और मृत जीवों की छवियों को ही प्रकट कर सकते हैं। इसके अलावा इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोप के तहत विलयनों को देखना असंभव था क्योंकि पानी सूक्ष्मदर्शी के निर्वात (वैक्युम) में वाष्पित हो जाता है।

किंतु अब स्थिति बदल गई है। तीन वैज्ञानिकों–स्विट्जरलैंड के लॉजेन विश्वविद्यालय के जेक्स ड्यूबोशे; न्यूयॉर्क, अमेरिका के कोलंबिया विश्वविद्यालय के जोचिम फ्रैंक और कैम्ब्रिज, यू. के. में आणविक जीवविज्ञान की एम.आर.सी. प्रयोगशाला के रिचर्ड हैण्डर्सन का कार्य इस दिशा में सराहनीय है जिन्हें 'विलयन में जैव अणुओं की उच्च वियोजन संरचना निर्धारण हेतु क्रायो–इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोपी विकसित करने के लिए' संयुक्त रूप से वर्ष 2017 के लिए रसायन विज्ञान के क्षेत्र में नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया है। क्रायो–इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोपी (क्रायो–ई एम) एक ऐसी तकनीक है जो जैव अणुओं का अतिशीघ्र हिमीकरण करके उनको चित्रित करना संभव बनाती है ताकि उनका प्राकृतिक आकार यथावत रह सके। यहाँ पर 'क्रायो', जो क्रायोजेनिक का लघु रूप है, बहुत कम तापमान को संदर्भित करता है। हालांकि, वास्तविक तापमान अच्छी तरह से परिभाषित नहीं है, यह ऋणात्मक 150° सेल्सियस से नीचे है। इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोपी के प्रसंग में, यह संदर्भित करता है कि जिस वस्तु की छवि तैयार करनी हो, इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोप की बीम के तहत् इसके अध्ययन की सुविधा के लिए ऐसे निम्न तापमान पर ठंडी की जाती है। यह विधि जैव अणुओं के छवि निर्माण को बहुत सरल बनाती है और उसमें सुधार करती है और इस विधि से जैव

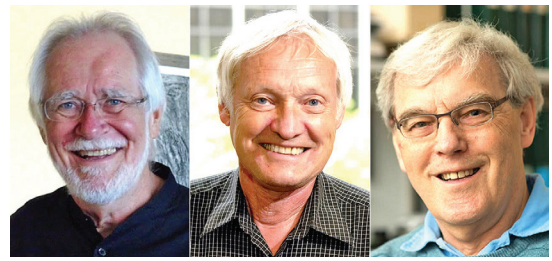

वर्ष 2017 के लिए रसायन शास्त्र के नोबेल पुरस्कार विजेता (बांये से दांये) जेम्स ड्यूबोशे, जोचिम फ्रैंक और रिचर्ड हैण्डर्सन (श्रेयः 7newsplus.com)

रसायन शास्त्र के क्षेत्र में एक क्रांति आई है जिससे जैव–अणुओं की छवियों को परमाणु स्तर की स्पष्टता के साथ कैद करना पहले से आसान बन गया है।

यह विधि अत्यधिक प्रभावी है और हाल के दिनों में दुर्ग्राहय ज़िका वायरस की छवि को अंकित करने के लिए इसका उपयोग किया गया है। जब शोधकर्ताओं ने संदेह करना शुरू किया कि ज़िका वायरस ब्राजील में नवजात शिशुओं के मस्तिष्क को क्षति पहुँचाने वाली महामारी का कारण बन रहा है तो उन्होंने वायरस का पता लगाने के लिए क्रायो–ई.एम की ओर कदम बढ़ाया। कुछ ही महीनों में, परमाणु वियोजन पर वायरस की त्रि–आयामी छवियाँ तैयार हो गई और शोधकर्ता संभावित इलाज की खोज में लग गए।

लेखक सीएसआईआर-निस्केयर द्वारा प्रकाशित लोकप्रिय विज्ञान मासिक साइंस रिपोर्टर के पूर्व संपादक हैं। वह 1994 में एनसीएसटीसी के विज्ञान लोकप्रियकरण में राष्ट्रीय विजेता हैं। उन्होंने 45 से अधिक लोकप्रिय विज्ञान पुस्तकें लिखी हैं। ई-मेलः bimanbasu@gmail.com

क्रायो तकनीक के अंतर्गत शोधकर्ता जैव अणुओं को संचलन के दौरान स्थिर कर सकते हैं और उन प्रक्रियाओं को देख सकते हैं जो उन्होंने पहले कभी नहीं देखें जो जीवन के रसायन शास्त्र की बुनियादी समझ और औषध विकास दोनों के लिए निर्णायक है। यह तकनीक महत्वपूर्ण दवाओं के लक्ष्यों की संरचना तैयार करने में दवा कंपनियों की पहले से ही मदद कर रही है और इसका उपयोग मूलभूत जीव विज्ञान को समझने के लिए किया जा रहा है जो भविष्य में दवा में सुधार ला सकता है।

बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में, वैज्ञानिक जानते थे कि जैव–अणु–प्रोटीन, डी.एन.ए एवं आर.एन.ए.– कोशिका में मूलभूत भूमिका निभाते हैं, लेकिन उन्हें उनके स्वरूप का पता नहीं था। यह केवल 1950 के दशक में संभव हुआ जब कैम्ब्रिज, यू.के. के शोधकर्ताओं ने एक्स–रे बीम में प्रोटीन क्रिस्टल को प्रदर्शित करना शुरू किया। तब पहली बार उनकी जटिल संरचनाओं को देखना संभव हुआ। 1980 के दशक की शुरुआत में, ठोस अवस्था और विलयन में प्रोटीनों का अध्ययन करने के लिए नाभिकीय चुंबकीय अनुनाद, एन.एम.आर. (Nuclear Magnetic Resonance, NMR) स्पेक्ट्रोस्कोपी के उपयोग के साथ एक्स–रे क्रिस्टल विज्ञान का उपयोग जोड़ दिया गया। इस तकनीक ने न केवल उनकी संरचना को प्रकट किया, अपितु उनके और अन्य अणुओं के साथ उनके परस्पर प्रभाव को भी प्रदर्शित किया। इन दोनों विधियों ने जैव–अणुओं के हजारों युक्त डाटाबेस मॉडल बनाना भी संभव किया जिसका उपयोग बुनियादी शोध से लेकर औषध विकास तक के लिए किया जाता है। हालांकि, दोनों विधियों की मौलिक सीमाएँ हैं। विलयन में एन.एम.आर. अपेक्षाकृत छोटे प्रोटीनों के लिए ही कार्य करता है और एक्स–रे क्रिस्टल विज्ञान केवल सुव्यवस्थित क्रिस्टल के साथ ही काम कर सकता है।

1980 के दशक की शुरुआत में, स्विट्जरलैंड के लॉजेन विश्वविद्यालय में एक जैव भौतिक विज्ञानी जेक्स ड्यूबोशे ने क्रायो–ई.एम की ओर इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोपी विकसित की, जब उन्होंने नमूनों के लिए एक विट्रिफिकेशन (काँच में रुपांतर) तकनीक लागू की जिसमें जैव अणु तरल इथेन का उपयोग कर नमूनों को ठंडा करके वैक्युम में भी अपने प्राकृतिक आकार को बनाए रख सकते थे। चूंकि परंपरागत तरीके में नमूनों के हिमीकरण से बर्फ के क्रिस्टल बन जाते, जो इलेक्ट्रॉन बीम को बाधित कर देते और छवियों को बिगाड़ देते। ड्यूबोशे ने नमूनों में पानी डालने और इसे अतिशीघ्र जमाने के लिए एक तरीका ढूँढा ताकि यह एक प्रकार के तरल काँच में परिवर्तित हो जाए; इसने अणुओं को ढह जाने से रोका और इलेक्ट्रॉन बीम के विवर्तन को टाला। तीव्र शीतलन नमूने में पानी को क्रिस्टल बनाने के बजाए काँच बनाने के लिए जमाता है। यद्यपि काँच ठोस प्रतीत होता है, लेकिन वास्तव

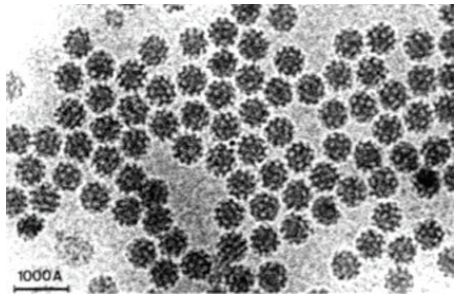

ड्यू बोशे की विट्रिफाइड पानी द्वारा घिरे वायरस की पहली छवियाँ (1984)

में इसे 'अतिशीतल' तरल कहा जाता है जिसमें अलग–अलग अणु एक आवधिक क्रिस्टलीय ठोस संरचना के बजाय यादृच्छिक रूप से व्यवस्थित होते हैं। ड्यूबोशे को एहसास हुआ कि यदि वह पानी से कांच प्राप्त कर सकता है– जिसे विट्रिफाइड (काँच में रूपांतरित) पानी भी कहा जाता है – तो इलेक्ट्रॉन बीम समान रूप से विवर्तित होगी और एक समरूप परिप्रेक्ष्य प्रदान करेगी।

1982 में इस महत्वपूर्ण खोज के बाद, ड्यूबोशे के शोध समूह ने तेजी से तकनीक का आधार विकसित किया जो अभी भी क्रायो–ई.एम. में प्रयोग किया जाता है। उन्होंने अपने जैविक नमूनों– जो प्रारंभ में वायरस के विभिन्न रूप थे– को पानी में

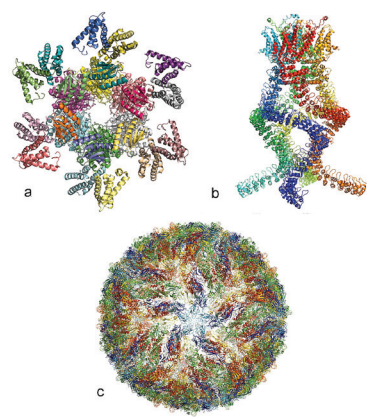

कुछ जटिल प्रोटीन समूहों की परमाणु संरचनाएँ: (क) सर्कैडियन लय को नियंत्रित करने वाला एक प्रोटीन समूह; (ख) एक ऐसा संवेदक जो कान में दाब परिवर्तनों को ग्रहण करके हमें सुनने योग्य बनाता है। (ग) ज़िका वायरस (श्रेय: nobelprize.org)

घुला दिया। विलयन को बाद में एक पतली झिल्ली के रूप में एक महीन धातु जाल में फैलाया गया जिसे तेजी से तरल ईथेन में ठंडा किया गया जिससे पानी की पतली झिल्ली जैविक नमूने के आस–पास काँच में रूपांतरित हो गई और इस प्रकार जैव–अणु वैक्युम में भी अपने प्राकृतिक आकार को बनाए रख सका। 1984 में, उन्होंने गोल और षट्कोणीय अलग–अलग वायरसों की पहली छवियाँ प्रकाशित की, जो विट्रिफाइड पानी की पृष्ठभूमि में दिखाई देती है। जैविक सामग्री अब अधिक सुगमता के साथ इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोपी के लिए तैयार की जा सकती है।

1975 में, कोलंबिया विश्वविद्यालय में आणविक जैव भौतिकी और जीव विज्ञान के प्रोफेसर जोचिम फ्रैंक ने सैद्धांतिक रणनीति प्रस्तुत की, जहाँ संपूर्ण त्रि–आयामी, उच्च वियोजन उत्पन्न करने के लिए इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोप की द्वि–आयामी छवियों की अपर्याप्त जानकारी को विलय किया गया। इस विचार को समझने में उन्हें एक दशक से अधिक समय लगा। 1980 के दशक के मध्य में, उन्होंने ऐसे एल्गोरिदम विकसित किए जिनसे वैज्ञानिक द्वि–आयामी छवियों का 3–डी संरचनाओं वाले उच्च वियोजन में विलय करके इलेक्ट्रॉन–माइक्रोस्कोपिक छवियों को बढ़ा सकते थे। फ्रैंक की छवि प्रक्रमण विधि क्रायो–ई एम के विकास के लिए मौलिक थी। उनकी छवि प्रक्रमण विधि ने स्पष्ट त्रि–आयामी संरचना को प्रकट करने के लिए इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोप की अस्पष्ट द्वि–आयामी छवियों का विश्लेषण और विलय करना संभव बना दिया। उन्होंने इस तकनीक का प्रयोग राइबोसोम, अर्थात् कोशिका की प्रोटीन संश्लेषण निर्माण–शाला, की सतह को आकार देने के लिए किया था। घोषणा के बाद एक प्रेस सम्मेलन के दौरान फ्रैंक ने बताया कि ये कुछ ऐसे असाधारण अणु हैं जिन्हें उन्होंने इस विधि द्वारा देखा था।

इस बीच, इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोपी तेजी से आगे बढ़ रही थी। 1975 तक, इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोपी द्वारा प्राप्य सर्वोत्तम वियोजन 7 आंग्स्ट्रॉम था, जो एक्स–रे क्रिस्टल विज्ञान द्वारा प्राप्त 3 आंग्स्ट्रॉम के वियोजन से कम था। 1990 में रिचर्ड हैण्डर्सन द्वारा एक महत्वपूर्ण खोज की गई जब उन्होंने एक प्रोटीन, बैक्टीरियोहोडासिन (एक बैंगनी–वर्णक प्रोटीन जो बैक्टीरिया की बाहरी झिल्ली में पाया जाता है और ए.टी.पी. के संश्लेषण में प्रकाश ऊर्जा को रासायनिक ऊर्जा में परिवर्तित करता है), का उच्च–वियोजन मॉडल बनाया। इस प्रकार यह सिद्ध होता है कि क्रायो–ईएम. उतनी ही विस्तृत छवियाँ प्रदान कर सकता है जितनी एक्स–रे क्रिस्टल विज्ञान का प्रयोग करके उत्पन्न की जाती है, जो एक महत्वपूर्ण कदम था। 1995 में, उन्होंने क्वार्टर्ली रिव्यू ऑफ बायो फिजिक्स में एक लेख लिखा था जिसमें यह विचार व्यक्त किया था कि इस तकनीक का प्रयोग एक दिन परमाणु वियोजन स्तर पर जैविक अणुओं की छवियाँ प्राप्त करने के लिए किया जाएगा।

उपरोक्त तीनों नोबेल पुरस्कार विजेताओं के काम ने जैव रसायन अनुसंधान को सजीव प्रणालियों के अणुओं को बारीकी से देखने का एक अनूठा साधन दिया है। यह पद्धति जैव रसायन को एक नए युग में लाई है, जिससे जैव अणुओं की स्पष्ट विस्तृत छवियों को कैद करना पहले से काफी आसान हो गया है। इसने दवा कंपनियों को महत्वपूर्ण दवाओं की संरचनाओं के निर्माण और आधारभूत जीवविज्ञान को समझने में सक्षम बनाया है जिससे भविष्य में दवाओं में सुधार किया जा सकता है। ■

दिनचर्या में पानी की बचत से बड़ा लक्ष्य हासिल हो सकता है

एम. ए. हक

हम इस बात को बखूबी जानते हैं कि आने वाले समय में कई देशों और समाजों में पानी की उपलब्धता एक बड़ा मुद्दा होगा। इन देशों में एक देश भारत भी होगा। पानी की कमी का नतीजा है स्वास्थ्य समस्याओं की प्रबलता। जिसका सीधा रिश्ता स्वच्छता की कमी से है। पानी की कमी की वजह से अस्वास्थ्यकर आदतें जन्म लेती हैं जो बदले में, विशेष तौर पर बच्चों में, अनेक स्वास्थ्य समस्याओं को न्यौता देती हैं। इसलिए हमें उपलब्ध पानी का संरक्षण करने के सभी संभव प्रयास करने चाहिए और पानी की खपत में किफायत बरतनी चाहिए। पानी की बर्बादी को रोककर हम पानी के संरक्षण के लक्ष्य को हासिल कर सकते हैं।

वर्ष 2017 के मानसून के बाद यह स्पष्ट हो गया था कि इस वर्ष देश में सामान्य से कम मानसून आया था। तब लगभग 5.2% की कमी के साथ मानसून का मौसम समाप्त हुआ था। करीबन 50% जिलों में सामान्य वर्षा हुई जबकि एक तिहाई से अधिक अर्थात लगभग 215 जिलों में कम वर्षा हुई। बारिश में इस कमी से कृषि और दूसरी गतिविधियों पर बुरा असर पड़ा। मानसून के पहले दौर में (जून से जुलाई, 2017) एक महत्वपूर्ण मुद्दा सामने यह आया कि वर्षा लगभग 2.5% अधिक हुई। लेकिन अगस्त और सितंबर के दौरान वर्षा में 12.5% की कमी दर्ज की गई। इसके नतीजे के रूप में काफी क्षेत्र प्रभावित हुए। अधिकतर जिले जहां कम बारिश हुई वे हरियाणा, मध्य प्रदेश, पंजाब, उत्तर प्रदेश और महाराष्ट्र के विदर्भ में थे।

भारत के मौसम विभाग का पूर्वानुमान है कि वर्ष 2018 में देश के लिए दक्षिण पश्चिम का मानसून सामान्य होगा। पूर्वानुमान यह है कि कुल वर्षा दीर्घ अवधि औसत (एलपीए) का 97 प्रतिशत हो सकती है। लेकिन हमें याद रखने की आवश्यकता है कि इस प्रकार के पूर्वानुमान में 5% त्रुटि की संभावना हमेशा ही बनी रहती है। इसका तात्पर्य है कि सामान्य मानसून एलपीए के 96–104% की सीमा के भीतर हो सकता है। मगर इस मसले पर किसी निष्कर्ष पर पहुंचने से पहले हमें थोड़ा सतर्क होने की आवश्यकता होती है क्योंकि कोई नियत पूर्वानुमान करना बहुत जल्दबाजी होगी। जून–जुलाई, 2018 तक जाकर ही हमारे पास अधिक विश्वसनीय जानकारी होगी और उस समय तक हमें धैर्य से काम लेना होगा। इसकी वजह स्पष्ट है। पिछले साल 2017 में सामान्य मानसून का पूर्वानुमान किया गया था। लेकिन अंतिम परिणाम यह था कि वर्षा में लगभग 5.2% की कमी थी और कुछ इलाकों में और भी कम वर्षा हुई थी।

दूसरा मुद्दा यह है कि जब हम मानसून और वर्षा की बात करते हैं तो हम पूरे देश या क्षेत्रीय स्तर का औसत लेते हैं। संपूर्ण परिदृश्य विचलित करने वाला नहीं हो सकता है, परंतु विविधताओं वाला यह विशाल देश भारत विभिन्न क्षेत्रों के लिए अलग तथ्य प्रकट कर सकता है। इस प्रकार औसत के आंकड़े को समय के साथ भ्रामक सिद्ध किया गया है। तीसरा मुद्दा है कि भारत में केवल तीन महीनों तक वर्षा और अन्य प्रकार के अवक्षेपण होते हैं। कुल वर्षा का लगभग 75% इन्हीं महीनों के दौरान वर्षन होता है। साल के बाकी हिस्सों में हल्की वर्षा या अन्य प्रकार के अवक्षेपण होते हैं।

तत्काल महत्व का मुद्दा यह है कि चूंकि वर्षा, बर्फ आदि हमें बहुत कम अवधि के लिए प्राप्त होते हैं, इसलिए इनसे मिलने वाले पानी को पूरी तरह उपयोग कर पाना संभव नहीं हो पाता है। इसका एकमात्र समाधान यह है कि इस तरह थोड़ी मात्रा में मिलने वाले पानी का संग्रह करने के प्रबंध किए जाएं ताकि हम अगले मानसून से पहले पूरे वर्ष के दौरान उचित मात्रा में पानी हासिल कर सकें। "बरसात के दिनों के लिए बचत करना" इस पुरानी कहावत को अब उलटने की जरूरत है। इस मामले में हमें सूखे दिनों के लिए पानी संजोने की जरूरत है। लेकिन त्रासदी यह है कि हम इस पहलू को सिरे से अनदेखा कर रहे हैं। बारिश से प्राप्त अधिकांश पानी का संचय नहीं किया जाता है और यह समुद्रों और महासागरों में चला जात है। इस प्रक्रिया में पानी विभिन्न समस्याओं जैसे कि (मिट्टी का कटाव,) भू निम्नीकरण और बाढ़ को उत्पन्न करता है।

उपलब्ध जल संसाधनों के संरक्षण और वायुमंडल से प्राप्त जल से जल संसाधनों की अभिवृद्धि से जुड़ी कुछ आसान व व्यावहारिक विधियां हैं, जिन पर हम यहां चर्चा करेंगे। ये साधारण तकनीके हैं जिन्हें हर कोई अपना सकता है। अगर हम इन तकनीकों को अपनाते हैं तो बहुत अधिक खर्च या प्रयास के बिना देश में जल की कमी से जुड़ी समस्या से निपटने में सहायता मिल सकती है।

डॉ. एम.ए. हक जेएनयू, नई दिल्ली से पी-एच.डी. है और केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड और पर्यावरण एवं वन मंत्रालय में महत्वपूर्ण पदों पर रहे हैं। वह कई विश्वविद्यालयों, प्रबंधन संस्थानों और व्यावसायिक संस्थानों के संकाय का दौरा किया है। 2007–2008 के दौरान, वह अफगानिस्तान में यूएनडीपी सलाहकार थे। ई–मेल: asrarulhaque@hotmail-com

प्राचीन मान्यताएं

एक और प्राचीन कहावत है कि "आपको दोबारा पहिए का आविष्कार करने की जरूरत नहीं है", इसका आशय यह है कि हमें वह सब बनाने की जरूरत नहीं जो पहले से अस्तित्व में हैं। यह एक उत्तम नियम है। मगर अक्सर समय के साथ कुछ चीजें भुला दी जाती हैं खास तौर पर वे जो नए जमाने में उपयुक्त नहीं होतीं। समय के साथ हमें आधुनिक युक्तियां और संसाधन/उपकरण उपयोग हेतु मिल जाते हैं और हम उनका इस्तेमाल शुरू कर देते हैं। इस प्रक्रिया में पुरानी चीजें और उपकरण भुला दी जाती हैं या वे अप्रचलित हो जाया करती हैं। ऐसा हमारे दिन प्रतिदिन के जीवन में लगभग हर एक मोर्चे पर घटित होता रहता है। हालांकि हालात बदल गए हैं और हमें पुरानी तकनीकों (युक्तियों) को अब दोबारा से इस्तेमाल में लाने की जरूरत है। एक संभावना यह भी हो सकती है कि पुरानी प्रणालियों या विधियों को नया बनाकर वर्तमान परिस्थितियों में इस्तेमाल किया जा सकता है। यहां पर हम ऐसी ही कुछ एक तकनीकों के बारे में चर्चा करने जा रहे हैं। इन्हें घरों में या सामुदायिक स्तर पर आसानी से और बिना महंगे उपकरण तथा बिना अत्यधिक प्रयासों के अपनाया जा सकता है। पानी की हर एक बूंद को सहेजकर इससे भविष्य की संसाधन वृद्धि की जा सकती है। ये उपाय इस मूल सिद्धांत पर आधारित होता हैः

वातानुकूलित प्रणाली से निकला जल

एयर कंडिशनर के दाम गिरने, बिजली की बेहतर उपलब्धता और लोगों की वहन क्षमता बढ़ने से हाल के वर्षों में ये उपकरण बहुत लोकप्रिय हो गए हैं। निर्माताओं के द्वारा एयर कंडिशनर का आकार छोटा करने करने और आर्किटेक्चर में बदलाव की वजह से भी लोगों का एसी की तरफ झुकाव बढ़ रहा है। सभी प्रकार के एयर कंडिशनरों में ऐसे निकास (आउटलेट) होते हैं जो संघनित पानी को बाहर छोड़ते हैं। जब यह मशीन हवा को ठंडा करती है तो हवा में मौजूद कुछ जल वाष्प कूलिंग क्वायल के बाहर संघनित हो जाती है। पानी सबसे पहले मशीन के आधार के पास इकठ्ठा होता है और फिर आउटलेट के माध्यम से लगभग लगातार बाहर निकलता रहता है। यह पानी वैसे तो मात्रा में बहुत कम होता है लेकिन कुछ घंटों या पूरे दिन के दौरान यह मात्रा अधिक हो जाती है। बड़ी एयर कंडिशनर मशीनों के मामले में जो प्रायः कार्यालयों, वाणिज्यिक परिसरों आदि में लगाए जाते हैं, वहां पर संघनित पानी की मात्रा और भी होती है। गर्म, आर्द्र मौसम के दौरान, ये मशीनें प्रतिदिन औसतन 90 लीटर तक पानी उत्पन्न करती हैं। अगर हम इसकी प्रक्रिया की भौतिकी को समझें तो हम पाएंगे कि संघनित होने वाला पानी आसवन जल (डिस्टिल्ड वाटर) होता है क्योंकि यह जल वाष्प है जो संघनित होती है और बाहर बहकर निकलती है। वर्तमान समय में, यह संघनित पानी नाले में बह जाता है, यानी कि व्यर्थ चला जाता है।

अगर हम चाहें तो इस पानी का अनेक तरीकों से बेहतर उपयोग कर सकते हैं। स्टोरेज बैटरियों के मामले में जिनकी टापिंग की जरूरत होती है, संघनित पानी बहुत उपयोगी होता है। आमतौर पर इस बैटरी का पानी हम बाजार से खरीदते हैं। इस प्रकार यदि एयर कंडिशनर के संघनित पानी का इसमें उपयोग किया जाए तो हम धन, ऊर्जा और पानी की बचत करेंगे। कपड़ों को धोने के लिए भी संघनित पानी का इस्तेमाल किया जा सकता है। सामान्य तौर पर हमें जो पानी उपलब्ध होता है, उसमें घुली हुई अवस्था में लवण विभिन्न सांद्रताओं में मौजूद रहता है, जो कि पानी को साबुन या डिटर्जेंट के प्रति कम कारगर बनाता है। अगर हम साबुन या डिटर्जेंट के साथ डिस्टिल्ड वाटर का इस्तेमाल करें तो हमें बेहतर परिणाम हासिल होंगे। पुराने समय में घरों के अंदर बड़े बर्तनों में बारिश का पानी संग्रह किया जाता था और उस पानी का इस्तेमाल कपड़े धोने में किया जाता था। इसके पीछे वही कारण था जिसकी चर्चा हमने पहले की है। बारिश का पानी घुलित लवणों से मुक्त होता है। अतः इस पानी से कपड़े धोना कहीं अधिक आसान और कारगर होता है।

सेन्ट्रल एयर कंडिशनर वाली सहित बड़ी जगहों पर बड़ी मात्रा में पानी निकलता है। मौजूदा समय में सेन्ट्रल एयर कंडिशनर के मामले में पानी व्यर्थ हो जाता है। अगर कुछ सोच–समझकर योजना बनाएं और कदम उठाए जाएं तो इस पानी का इस्तेमाल लान, फूलों एवं किचेन गार्डन की सिंचाई आदि में किया जा सकता है या फिर एयर कंडिशनर के आउटलेट को भूजल पुनर्भरण सुविधा से जोड़कर भूजल की भरपाई की जा सकती है। यह एक अतिरिक्त लाभ साबित होगा जिसमें तेज गर्मी के दिनों में भूजल में नमी पहुंचती रहेगी और इस तरह इस मौसम में अधिकांश भारत में व्याप्त कम बारिश की समस्या का कुछ समाधान निकलेगा।

सिंचाई के लिए पीईटी बोतलों का उपयोग

शहरों और कस्बों में रिहायशी जगहें छोटी होती जा रही हैं। फूल और दूसरे प्रकार के पौधों को लगाने के लिए वहां भूमि की कोई गुंजाइश नहीं बची है। मगर लोग सजावट की दृष्टि से पौधे लगाना चाहते हैं। अनेक परिवार रसायनों से मुक्ति पाने के लिए घर में सब्जियां और फल उगाने में दिलचस्पी लेने लगे हैं। इसके लिए उनके पास मिट्टी, सीमेंट या प्लास्टिक के गमलों के अलावा और कोई विकल्प मौजूद नहीं है। उन्हें इस तरह उगाए जाने वाले पौधों को नियमित तौर पर और विशेष रूप से गर्मी में पानी देना होता है। कभी–कभी इन गमलों में एक दिन में दो बार तक पानी देना होता है। दैनिक आधार पर पानी की आवश्यकता अधिक होती है, और यह गमलों की संख्या तथा पौधे के प्रकार पर निर्भर करता है। दूसरी तरफ हर एक शहर और कस्बे में पानी की आपूर्ति सीमित है। इसका यह नतीजा होता है कि गमले में लगे पौधों का विकास कर पाना या कम से कम उनको बचाये रखना एक कठिन कार्य साबित होता है।

हम कोई भी साधारण तकनीक अपना सकते हैं जिससे पानी की वांछित मात्रा को कम किया जा सकता है और जो पौधों के जीवन के लिए भी सहायक हो। हम पीईटी की बेकार बोतलों को ले सकते हैं, उनकी तली को काटकर बोतल के ढक्कन में एक छोटा छेद करें। ढक्कन को उसकी सामान्य जगह पर लगाकर बोतल को उल्टा कर दें ताकि बोतलों की गर्दन मिट्टी में दब जाए। बोतलों में पानी भरकर इन्हें यूं ही छोड़ा जा सकता है। इस तरह बोतल की ढक्कन में बने छेद के रास्ते पानी मिट्टी में गहरे पहुंचकर जड़ों को नमी प्रदान करेगा। पौधों को पानी मिलेगा और धीरे धीरे मिलेगा। मिट्टी की सतह पर पानी के सामान्य छिड़काव की अपेक्षा इस तरह की सिंचाई से समान मात्रा में पानी लम्बे समय तक पौधे के जड़ क्षेत्रों तक पहुंचता रहेगा। इसके परिणामस्वरूप पानी का उपयोग अधिक कुशलता से होगा। इस प्रक्रिया में मिट्टी से वाष्पीकरण भी कम होगा और इस तरह पानी की बर्बादी में कमी आएगी।

हम आमतौर पर देखते हैं कि अधिकता में सिंचाई किए जाने की दशा में गमलों की तली से अतिरिक्त पानी रिसकर बाहर निकलता है। इस तरह पानी बर्बाद होता है और जिस सतह पर गमला रखा गया है, वह जगह गंदी होती है। इन सभी समस्याओं को एक बार में हल किया जा सकता है। गमलों के आकार के अनुसार बोतलों का चुनाव करने में सावधानी रखनी है। छोटे गमलों के लिए 500 मिलीलीटर के बोतल पर्याप्त हो सकते हैं जबकि बड़े गमलों के मामले में एक लीटर या उससे बड़ी बोतल प्रयोग की जा सकती है। कुछ दिनों की आजमाइश के माध्यम से इस बात को जाना जा सकता है कि बोतल में भरा पानी कितनी देर में समाप्त होता है और कितनी बार पौधे की सिंचाई की जानी है। इस प्रकार मेहनत भी कम लगेगी ओर पानी की बचत भी होगी।

किचेन गार्डन सहित छोटे बगीचों या खेतों में

भी इस तकनीक को अपनाया जा सकता है। इसमें पौधों के नजदीक एकांतर क्रम में बोतलों को लगाना होता है। इनमें सुबह के समय पानी भरना होता है और इन्हें रिसने के लिए छोड़ देते हैं। जहां पौधे कुछ दुरी पर होते है, जैसे कि फलों के पौधे, आरोही पौधे, झाड़ियां आदि, उनमें यह तकनीक अधिक उपयोगी साबित होगी। यहां पौधों के बहुत पास बोतलें लगाई जा सकती हैं। इस प्रक्रिया में आप पाएंगे कि सिंचाई के पानी के अलावा प्रयास और ऊर्जा में भी भारी बचत होती है। भीषण गर्मी के मौसम में भी पौधे जीवित रह सकेंगे क्योंकि इसमें पानी पौधे की जड़ों तक सीधा पहुंचता है।

आरओ प्रणाली से निकले पानी को कैसे सहेजें

पानी से होने वाले रोगों की बढ़ती घटनाओं और नगर पालिकाओं की जल आपूर्ति प्रणाली की अकुशलता के कारण अधिक से अधिक संख्या में लोग पानी के लिए आरओ (रिवर्स आस्मोसिस) फिल्ट्रेशन सिस्टम को लगवा रहे हैं। आवश्यकता के अनुसार इसके आकार और क्षमता का निर्णय लिया जाता है। घरों में छोटे आकार के आरओ सिस्टम पर्याप्त होते हैं जबकि बड़े समुदायों में बड़े आकार के आरओ लगाए जाते हैं। पानी से जुड़ी व्यावसायिक व्यवस्थाएं भी बनाई गई हैं जो उपभोक्ताओं को बोतलबंद पानी मुहैया करती हैं।

लगभग सभी आरओ प्रणालीओं में फिल्टर्ड/शुद्धिकृत पानी के समांतर 'बेकार/अवशेष' पानी बाहर निकलता है। शुद्धिकृत पानी का उपयोग किया जाता है और अवशेष के रूप में बाहर निकले पानी को फेंक दिया जाता है। सामान्य तौर पर यह बेकार पानी नाले या सीवर लाइन में बहा दिया जाता है। इस बेकार पानी की मात्रा सप्लाई के पानी में घुले पदार्थों की मात्रा के समानुपाती होती है। अगर इसकी मात्रा अधिक होती है तो बेकार पानी की मात्रा भी अधिक होगी। घरेलू स्तर पर इसकी मात्रा भले ही कम प्रतीत होती है, लेकिन समुदाय के स्तर पर यह मात्रा बहुत ज्यादा होती है और काफी में पानी नष्ट होता है।

वास्तव में यह पानी पीने या खाना पकाने आदि के काम में नहीं लाया जा सकता है। लेकिन इसे दूसरे उद्देश्यों में उपयोग किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, इसका इस्तेमाल बर्तनों को धोने में किया जा सकता है। चाहें तो अंत में इन बर्तनों में चिपके अतिरिक्त लवण को दूर करने के लिए इन्हें एक बार सामान्य पानी से धोया जा सकता है। इस पानी को लॉन, किचेन गार्डन या गमले वाले पौधों की सिंचाई करने के लिए भी इस्तेमाल किया जा सकता है। अगर इस अपशिष्ट पानी में लवण की मात्रा बहुत अधिक है तो सिंचाई के लिए इसमें सामान्य सप्लाई का पानी मिलाया जा सकता है। उपकरण के आपूर्तिकर्ताओं के द्वारा कुल लवण की मात्रा को आसानी से मापा जा सकता है। जब ये लगाने के लिए आते हैं तो सप्लाई के पानी, फिल्टर्ड पानी और अपशिष्ट पानी में लवण की मात्रा की जांच करते हैं। इस तरह इसके उपयोग के पैटर्न के संबंध में आसानी से निर्णय लिया जा सकता है, विशेष रूप से सिंचाई के लिए इस जांच का एक और तरीका है, अपने मुंह में थोड़ा पानी रख कर देखना। अगर यह बहुत नमकीन नहीं है तो इसका प्रयोग सीधे तौर पर सिंचाई के लिए किया जा सकता है। अन्यथा इसमें विभिन्न अनुपातों में सप्लाई का पानी मिलाया जा सकता है। जैसे भी हो पानी व्यर्थ नहीं होना चाहिए।

टोंटीयुक्त पानी के बर्तनों की उपयोगिता

यह बहुत पुरानी बात नहीं है जब घरों में पीतल, ताम्बे, एल्यूमिनियम या कुछ और धातु के बने बर्तनों में पानी रखा जाता था। ये बर्तन दो प्रकार के हुआ करते थे। पहला, एक चौड़े मुंह वाला साधारण बर्तन था जिसे लोटा कहते थे। हममें से कई लोगों को शायद 'अकबरी लोटा' शीर्षक वाली प्रसिद्ध कहानी भी याद होगी। यह एक व्यंग्य था जिसमें यह दिखाया गया था कि कैसे भारत पर शासन करने वाले अंग्रेजों को आसानी से मूर्ख बनाया जा सकता था। दूसरे प्रकार का धातु का बर्तन टोंटी लगा होता था जिसमें से पानी बाहर निकलता था। यह टोंटी वाला बर्तन अधिक उपयोगी था क्योंकि इसमें से पानी धीरे–धीरे और एक नियंत्रित तरीके से बाहर आ सकता था। अधिकांश घरों में इन दोनों का उपयोग जरूरत के अनुसार किया जाता था। नलकों, वाश बेसिन, टायलेट शावर आदि के आविष्कारों के साथ इस तरह के पुराने परंपरागत बर्तनों को पीछे छोड़ दिया गया, और ऐसा खास तौर पर शहरों में अधिक किया गया। लेकिन हमें इनका पुनः आविष्कार कर इनका इस्तेमाल करने की आवश्यकता है। विशेषकर टोंटी वाले धातु के बर्तन ज्यादा उपयोगी हैं क्योंकि इनके पुनः प्रयोग से हर दिन बड़ी मात्रा में बहुमूल्य पानी का बचाव किया जा सकता है। किसी प्रकार से टोंटी वाले बर्तन मुस्लिम संस्कृति से संबद्ध हो गए और यह मुस्लिम परिवारों तथा संस्थाओं का हिस्सा बन गए। उदाहरण के रूप में, आज भी अधिकांश मस्जिदों में खास तौर पर छोटे नगरों और ग्रामीण क्षेत्रों में इसका इस्तेमाल प्रक्षालन (नमाज से पहले हाथ, चेहरा, पैर, आदि को धोने) के लिए किया जाता है। इसका मकसद भी पानी को बचाना है क्योंकि वहां इसे कुंएं या हैंड पंप से निकालकर लाया जाता है या फिर बाहर से लाया जाता है। शहरों के मस्जिद में इस उद्देश्य के लिए पानी की टोंटियां लगी होती हैं। अभी कुछ दशक पहले तक मैं यह देखा करता था कि सड़क के किनारे और मन्दिरों आदि में तांबे के ऐसे बर्तन प्याऊ (ऐसे बूथ जहां पर निःशुल्क पीने का पानी उपलब्ध किया जाता है) में रखे होते थे। इसके इस्तेमाल के पीछे मूल विचार पानी की बर्बादी को कम करना था। ऐसे बर्तन मैंने मंदिरों और हिंदू घरों में बने पूजा स्थल पर भी देखे हैं। ये बर्तन सामान्य तौर पर तांबे के बने होते थे। कुछ घरों में ये बर्तन आज भी पाए जा सकते हैं। करीब तीन दशक पहले जब मैं लखनऊ विश्वविद्यालय गया था तो मैंने वहां के शौचालय में वैसे बर्तन देखे थे। संभवतः उन स्थानों पर इन बर्तनों का आज भी इस्तेमाल हो रहा हो, जहां मुस्लिम प्रभाव अधिक है। ये बर्तन सामान्य तौर पर पीतल या एल्यूमिनियम के बने होते हैं। हालांकि आजकल इस तरह के बर्तन आमतौर पर प्लास्टिक से बनाए जा रहे हैं। बाजार में ऐसे सस्ते बर्तन भी उपलब्ध हैं जिन्हें लुहार बेकार बर्तनों से स्थानीय तौर पर बनाते हैं। अगर हम किसी काम को करने के लिए इन टोंटी वाले बर्तनों और नल की टोंटी से निकले पानी की मात्रा की तुलना करें तो इनके बीच का अनुपात (या उससे भी कम पाएंगे। साधारणतया ये सब इतना महत्वपूर्ण नहीं लगता, परंतु घरेलू या सामुदायिक स्तर पर प्रतिदिन पानी की होने वाली बचत का अनुमान लगाएं तो आप आश्चर्य में पड़ जाएंगे।

निष्कर्ष

हम इस बात को बखूबी जानते हैं कि आने वाले समय में कई देशों और समाजों में पानी की उपलब्धता एक बड़ा मुद्दा होगा। इन देशों में एक देश भारत भी होगा। राष्ट्रीय समेकित जल संसाधन विकास आयोग (एनसीआईडब्ल्यूआरडी) के अनुसार देश में उपलब्ध लगभग 83% ताजे पानी का उपयोग सिंचाई के लिए किया जाता है। बाकी बचे 17% पानी से घरेलू, औद्योगिक और दूसरे क्षेत्रों की पानी से जुड़ी जरूरतों को पूरा किया जाता है। वर्ष 2050 के लिए आयोग ने यह अनुमान लगाया है कि पानी की मांग बढकर 1,180 अरब क्यूबिक मीटर हो जाएगी। भारत के लिए पानी की यह मांग पूरी करना बेहद कठिन होगा। पानी की कमी से जुड़े बहुत कम ज्ञात नतीजे का एक रूप है स्वास्थ्य समस्याओं की प्रबलता, जिसका सीधा रिश्ता स्वच्छता की कमी से है। पानी की कमी की वजह से अस्वास्थ्यकर आदतें जन्म लेती हैं जो बदले में विशेष तौर पर बच्चों में अनेक स्वास्थ्य समस्याओं को न्यौता देती हैं। इसलिए हमें उपलब्ध पानी का संरक्षण करने के सभी संभव प्रयास करने चाहिए और पानी की खपत में किफायत बरतनी चाहिए। पानी की बर्बादी को रोककर हम पानी के संरक्षण के लक्ष्य को हासिल कर सकते हैं।

(अनुवादः श्री जनमेजय मणि त्रिपाठी) ■

कृत्रिम बुद्धिमत्ता– विश्व का यह तीव्र बदलाव अभूतपूर्व है

उदित मलिक

कृत्रिम बुद्धि ने पहले की अपेक्षा निर्णय लेने की प्रक्रिया बहुत आसान बना दी है। इसके कारण मानव त्रुटियाँ घट रही हैं और प्रक्रिया की कुशलता में वृद्धि हो रही है। इसके द्वारा गूंगे व्यक्ति को बोलने में और पक्षाघात से पीड़ित व्यक्ति को अपने विचार व्यक्त करने में मदद मिल रही है। हमारे दैनिक जीवन में प्रयोग किए जाने वाली बुद्धिमान मशीनों के कुछ उदाहरण हैं स्मार्ट फोन, ड्रोन, रोबोट, उपग्रह और अन्य बुद्धिमान गैजेट। उत्पादन उद्योगों, स्वास्थ्य क्षेत्र और आर्थिक क्षेत्र में कृत्रिम बुद्धि के प्रयोगों के अनेकों उदाहरण है। लेकिन प्रौद्योगिकी के इन समस्त सकारात्मक पहलुओं के साथ, कृत्रिम बुद्धि से जुड़ी हुई एक गंभीर बहस भी छिड़ी हुई है। उदाहरण के लिए प्रौद्योगिकी में होने वाले नवाचारों के कारण मानव को रोजगारों का खतरा बढ़ा है।

मानव जाति अपने रहन सहन में बदलाव लाने के लिए विभिन्न प्रकार की तकनीकों का विकास करती आ रही है। इनमे से कुछ तकनीकों ने विश्व को एवं मानव के जीवंत व्यवहार को प्रबल रूप से बदल दिया है। पहिये की खोज से लेकर इंजिन और कंप्यूटर जैसी तकनीकों की खोज ने आज के विश्व की दशा एवं दिशा बदलने में अहम भूमिका निभाई है। लेकिन अब आगे क्या? स्मार्ट गैजेट, मशीनें और रोबोट आज विश्व पर विजय प्राप्त कर रहे हैं और इन्होंने मानव जीवन को बदल कर रख दिया है। ये सभी हमें प्रौद्योगिकी के उपहारस्वरूप मिले हैं जिन्हें सामूहिक रूप से हम कृत्रिम बुद्धि या आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस कहते हैं।

कृत्रिम बुद्धि कंप्यूटर विज्ञान का एक क्षेत्र है। यह ऐसी बुद्धिमान मशीनों का निर्माण करने पर केन्द्रित है जो मानव मस्तिष्क की तरह या उससे भी बेहतर ढंग से कार्य कर सकें। कृत्रिम बुद्धि एक विस्तृत डोमेन तकनीक है जो सांख्यिकीय विश्लेषण, मशीनों द्वारा सीखना, नमूनो की पहचान करना, तर्क करना, संभाव्यता सिद्धान्त, जैविक रूप से प्रेरित दृष्टिकोण जैसे तंत्रिका नेटवर्क, विकासवादी कम्प्यूटिंग या मॉडलिंग और इन जैसी विभिन्न शाखाओं का समावेश है। इन तरीको का उपयोग करके विभिन्न प्रकार के बुनियादी कार्यों को कृत्रिम बुद्धि प्रौद्योगिकी द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। इनके कुछ उदाहरणों मे शामिल हैय शिक्षा,तर्क, वर्गीकरण, पूर्वानुमान, समस्या समाधान, भाषा की समझ, परिकल्पना गढ़ना आदि और ये सूची अंतहीन है।

धातु से निर्मित बुद्धिमान प्राणियों का अस्पष्ट वर्णन ग्रीक पौराणिक कथाओं मे पाया जा सकता है। टैलस नाम का एक प्राणी कांस्य धातु से क्रेट में यूरोपा को समुद्री डाकू और आक्रमणकारियों से बचाने के लिए बनाया गया था। औद्योगिक क्रांति और विश्व युद्ध प्रथम और द्वितीय ने प्रौद्योगिकी के क्षेत्र मे काफी प्रगति की है। 1948 मे ब्रिटिश गणितज्ञ एलन ट्यूरिंग ने अपनी पुस्तक ''इंटेलिजेंट मशीनरी'' में लिखा है ''मेरा विचार ये है कि क्या ऐसी मशीन का निर्माण किया जा सकता है जो मानव मन के व्यवहार को बहुत नजदीक से पहचान सके''। 1948 और 1949 में अमेरिका में जन्मे ब्रिटिश न्यूरो फिजियोलोजिस्ट और रोबोटीशियन विल्लियम ग्रे वाल्टर ने पहली बार रोबोट बनाया जिसका नाम एलमर और एलसी रखा। इन रोबोटों को उनकी धीमी गति के कारण कछुअे कहा जाता था। उनमे प्रकाश की दिशा में चलने की क्षमता थी लेकिन कृत्रिम बुद्धि शब्द सबसे पहले अमेरिकी अग्रणी कंप्यूटर वैज्ञानिक और आविष्कारक जौन मेकरथी ने 1956 मे स्टेनफोर्ड विश्वविद्यालय के डार्मौथ सम्मेलन में शुरू किया था। इसके साथ ही इस प्रकार की मशीन बनाने की शुरुआत हो गई जो मनुष्य की तुलना में सामान्य बुद्धि से अधिक है।

1970 के दशक के शुरुआती दिनों में वैज्ञानिक समुदाय द्वारा किए जा रहे कई प्रयासों के बावजूद कृत्रिम बुद्धि की खोज खतरे में थी क्योंकि सरकारों द्वारा इसमें भारी निवेश के बावजूद कोई संतोषजनक प्रगति नहीं हुई थी। 1980 के दशक में कृत्रिम बुद्धि ने एक विशिष्ट व्यापार समाधान के रूप में अलग मोड़ लिया। सामान्य बुद्धिमत्ता के साथ एक मशीन बनाने के बजाए एक ऐसी प्रणाली का निर्माण किया गया जो पूर्व निर्धारित कार्य कर सके। डिजिटल उपकरण निगम, कृत्रिम बुद्धि के लाभ का एहसास करने वाले कुछ संगठनों में से एक था। परंतु इस तरह की विशेषज्ञ प्रणालियाँ मनुष्य/जानवरों की जैविक खुफिया जानकारी के साथ तुलनीय नहीं थी। 1990 में ऑस्ट्रालियाई रोबोट वैज्ञानिक रोडनी ब्रूकस ने एक पेपर प्रकाशित किया ''हाथी नहीं खेलते शतरंज''। उन्होंने तर्क दिया कि वांछित प्राप्त करने के लिए बुद्धि मान निर्देशों के साथ मशीनों की पूर्व प्रोग्रामिंग करना गलत प्रयास था और उन्होंने एक 'व्यवहार आधारित' दृष्टिकोण की शुरुआत की जिसके द्वारा अधिक बुद्धि मान रोबोट बनाने में मदद मिली।

तब से लेकर अब तक कृत्रिम बुद्धि ने एक लंबा सफर तय किया है। स्मार्टफोन, बुद्धिमान गैजेट्स , ड्रोन, रोबोट और उपग्रह आदि बुद्धिमान मशीनों के दैनिक जीवन के उदाहरणों में से कुछ है। लेकिन क्या ये केवल कुछ ही उदाहरण है ऐसी बुद्धिमान तकनीक के अनुप्रयोगों के? जवाब साफ तौर पर ना है। क्योंकि कृत्रिम बुद्धि के कई और अनुप्रयोग है एवं प्रौद्योगिकी

उदित मलिक को जीव विज्ञान तकनीक के क्षेत्र में बौद्धिक सम्पदा उद्योग में कई वर्षों का अनुभव है। ईमेलः uditmalik20@gmail.com।

ने भी कई क्षेत्रों में मनुष्यों को चुनौती देना शुरू कर दिया है।

कृत्रिम बुद्धि के उपयोग क्षेत्र

कई विज्ञान कथा कार्टून वास्तविकता से केवल कुछ साल ही दूर है। कृत्रिम बुद्धि अनुप्रयोगों के सभी क्षेत्रों की चर्चा करना एक मुश्किल काम होगा, इसलिए हम केवल इसके कुछ सामान्य अनुप्रयोगों की चर्चा कर रहे है।

गेमिंग

गेमिंग में कृत्रिम बुद्धि का सबसे आम उपयोग गैर खिलाड़ी चरित्र या मशीन खिलाड़ी बनाना है। मशीन खिलाड़ी मानव खिलाड़ी के साथ खेलने के लिए निर्देशों के एक पूर्व सैट का उपयोग करता है लेकिन मशीन लर्निंग की तकनीकों के साथ मशीन खिलाड़ी अपने पिछले अनुभवों से सीखते है, खेलते है तथा अगले दौर में अपने प्रदर्शन को सुधारने की कोशिश करते हैं।

ध्वनि की पहचान

हममें से हर एक गूगल और अन्य कंपनियों के ऐसे विज्ञापनों को देखते होंगे जो आपसे मोबाइल पर बात करने के लिए कहते है और वह आपको जवाब देता है। यह ध्वनि की पहचान का एक उदाहरण है। मशीन लर्निंग की क्षमता के साथ, सर्च इंजिन आपको सर्वोत्तम परिणाम प्रदान करने में सक्षम होता है। संयुक्त एयरलाइन्स ने उड़ान सूचना के लिए कीबोर्ड को बदल दिया है और उड़ान संख्याएँ एवं शहर के नाम के लिए ध्वनि पहचान का उपयोग किया है। इस क्षमता का उपयोग कम्प्यूटर निर्देशों को निर्देशित करने के लिए भी किया जा सकता है।

विनिर्माण

लगभग सभी विनिर्माण इकाइयां अब मशीनों का उपयोग करती है जो स्वचालित हो रही है और जिनसे माल के उत्पादन में शामिल समय और लागत में कमी आती है। फॉक्सकौन नामक एक बड़ी प्रौद्योगिकी कंपनी जो एपल, गूगल और ऐमेजोन को गैजेट्स की आपूर्ति करती है,ने श्रम की लागत को संतुलित करने के लिए 10,000 रोबोटों को रोजगार दिये है। दरवाजों की डिजिटल डिजाइनिंग, यंत्रों और ड्रग्स की 3 डी प्रिंटिंग इस क्षेत्र के कुछ अन्य उदाहरण है।

वित्तीय क्षेत्र

वित्तीय क्षेत्र में भी कृत्रिम बुद्धि के कई उपयोग है। यह सुरक्षित लेन–देन सुनिश्चित करने के लिए और धोखा–धड़ी को रोकने के लिए बैंकों द्वारा नियोजित किया जाता है। वित्त प्रक्रिया में उत्पन्न बड़े डाटा को संसाधित करने और समझने के लिए भी कृत्रिम बुद्धि का उपयोग किया जाता है ताकि त्वरित डाटा प्रोसेसिंग हो सके और इसे समझने में सक्षम बना जा सके।

परिवहन

कृत्रिम बुद्धि हमारे परिवहन के उपयोग के तरीकों को बदल रही है। ऑनलाइन मानचित्र अब उपलब्ध है जो हमारे गंतव्य के लिए मार्ग दिखाते है। यह हमे कम दूरी का रास्ता सुझाते हैं और हमें अवगत कराते हैं उन सड़कों से जहां ट्रैफिक जाम की संभावना हो सकती है। ड्राइवरहीन कार/ट्रक भी अब सड़कों पर चलने लगे है और वो दिन दूर नहीं जब सड़कों पर इस तरह की कारें एक आम दृश्य बन जाएंगी। अधिक यातायात के दौरान किराये पर अधिभार चार्ज करना मोबाइल ऐप कैब द्वारा कृत्रिम बुद्धि तकनीक के उपयोग का एक उदाहरण है।

सैन्य क्षेत्र

युद्ध के दौरान जीवन के नुकसान कम करने के लिए सैन्य क्षेत्रों में भी कृत्रिम बुद्धि का भरपूर उपयोग किया जा रहा है। बुद्धिमान हथियारों का प्रयोग पहले से ही किया जा रहा है। बुद्धिमान सिपाही रोबोट अनुसंधान के अधीन है जो मानव सैनिकों के स्थान पर इस्तेमाल किए जा सकते है। ड्रोन और स्मार्ट वाहनों का इस्तेमाल भी सैन्य क्षेत्र में किया जा रहा है।

स्वास्थ्य देखभाल

स्वास्थ्य देखभाल कृत्रिम बुद्धि के उपयोग करने वाले सबसे सक्रिय उद्योगों में से एक है। कुछ स्वास्थ्य देखभाल के प्रयोग नीचे दिये गए है।

निदान

एमआरआई, सिटी–स्कैन और अल्ट्रासाउंड आदि कुछ सबसे अधिक इस्तेमाल किए जाने वाले छवि आधारित नैदानिक उपकरण है। विभिन्न एल्गॉरिथ्म आधारित कृत्रिम बुद्धि इंटरफेस भी उपलब्ध है जो असामान्यताओं का अनुमान लगाते है और गलत एवं नकारात्मक परिणामों से बचाते है। गूगल पेरेंट कंपनी ने एक ऐसी कृत्रिम बुद्धि विकसित की है जो कैंसर का पता लगाने में मदद करती है। यही कार्य पहले केवल विशेषज्ञों द्वारा ही संभव हो सकता था।

रोबोट सहायता कृत सर्जरी

यांत्रिक कार्यशालाओं के समान सर्जरी में भी रोबोट तैनात किए जा रहे हैं। सर्जरी में रोबोट की मदद से यह संभव हो गया है कि न्यूनतम प्रवेश और उच्च परिशुद्धता के साथ सर्जरी की जा सके। इससे मरीजों को ठीक होने में कम समय लगता है, अस्पताल में कम समय तक रहना पड़ता है और दर्द भी कम होता है।

औषधि विकास

औषधि विकास एक बहुत कठिन एवं लंबी प्रक्रिया है। एक दवा को सभी चरणों से गुजरने के बाद बाजार में आने के लिए लगभग 20 वर्ष का समय लगता है। कृत्रिम बुद्धि की मदद से औषधि विकास की प्रक्रिया बहुत आसान और कम समय लेने वाली होती जा रही है और इसके प्रत्येक चरण जैसे संभावित दवा अणुओं की पहचान, दवा का लक्ष्य निर्धारण और इष्टतम फोर्मूलेशन तैयार करना आदि में कृत्रिम बुद्धि का उपयोग किया जा रहा है।

बायोइन्फोर्मेटिक्स

इसका एक क्षेत्र जीव विज्ञान और कम्प्यूटर का एक साथ उपयोग करता है। कृत्रिम बुद्धि के उपयोग ने कोशिकाओं के शरीर विज्ञान और जैव रसायन की समझ को आसान बना दिया है। कृत्रिम बुद्धि के उपयोग के लिए एक आभासी कोशिका बनाई जाती है।

उपरोक्त के अलावा नर्सिंग सहायता प्रदान करने में एवं अस्पताल प्रबंधन तथा प्रयोगशाला के कार्य में भी कृत्रिम बुद्धि को तैनात किया जा रहा है।

शिक्षा

कक्षा अध्यापन का पूरक बनना शिक्षा में कृत्रिम बुद्धि के कई अनुप्रयोगों में से एक है। विभिन्न छात्रों की अलग अलग प्रगति दर होती है और शिक्षिकों को गत छात्रों की शैक्षिक आवश्यकताओं के अनुरुप उनसे व्यक्तिगत रूप से निपटना मुश्किल लगता है। मशीन लर्निंग की एल्गॉरिथ्म विकसित की गयी है जो अंतर्दृष्टि प्रदान करती है और शिक्षकों को उनकी शिक्षाओं में आ रहे उस अंतराल की पहचान कराती है जहां विद्यार्थी संघर्ष कर रहे हैं।

वैज्ञानिक रोबोट

2009 में कैंब्रिज विश्वविद्यालय और ऐरिस्टविथ विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों ने 'ऐडम' नामक एक रोबोट बनाया। इस रोबोट को बिना किसी मानव हस्तक्षेप के शोध कार्य में शुरुआत से लेकर अंत तक की सारी गतिविधियों को संचालित करने के लिए बनाया गया था। इस रोबोट ने बेकर के खमीर (बेकर्स पोस्ट) पर भी काम किया था। कृत्रिम बुद्धि का उपयोग करके इसने भविष्यवाणी की थी कि जैव रासायनिक अभिक्रिया को उत्प्रेरित करने में कुछ विशिष्ट जीव शामिल होते हैं। अगला आने वाला रोबोट 'ईव', ऐडम से अधिक उन्नत हो जाएगा।

उपरोक्त सभी दृष्टांत कृत्रिम बुद्धि के कुछ सीमित अनुप्रयोगों का वर्णन करते हैं। कृत्रिम बुद्धि ने निर्णय लेने की प्रक्रिया पहले की तुलना में आसान बना दी है। इससे मानव त्रुटियाँ कम हो रही है और दक्षता में वृद्धि हो रही हैं। इसकी मदद से गूंगा व्यक्ति भी बोल सकता है और पक्षाघात पीड़ित व्यक्ति भी अपने विचारों को व्यक्त कर सकता है। लेकिन प्रौद्योगिकी के इन सभी सकारात्मक पहलुओं के साथ कृत्रिम बुद्धि से जुड़ी एक गंभीर बहस भी छिड़ी हुई है। उदाहरण के लिए तकनीकी प्रगति हमेशा मानव रोजगार के लिए खतरा बनती है और कृत्रिम बुद्धि भी एक ऐसे ही बड़े खतरे की ओर इशारा करती है। हाल ही में कई आईटी कंपनियों में कृत्रिम बुद्धि के प्रयोग के परिणामस्वरूप हजारों कर्मचारियों को अपनी नौकरी से हाथ धोना पड़ा है, क्योंकि तकनीकों के आने के कारण मानव पेशेवरों की आवश्यकता नहीं रह जाती है। 2016 में फौक्सकौन नामक कंपनी ने अपने कारखाने में 60,000 श्रमिकों को रोबोटों के साथ बदल दिया अर्थात उन सबकी नौकरी कृत्रिम बुद्धि के कारण चली गयी। नौकरियों के जोखिम के अलावा अनेक और भी अधिक गंभीर सवाल उठते हैं जैसे, 'अगर रोबोट मनुष्यों की तुलना में अधिक कुशल हो जाते हैं तो क्या वे मानव जाति को खतम कर सकते हैं?' कुछ ऐसा ही महान वैज्ञानिक स्टीफेन हॉकिंग ने भी कहा था, ''पूर्ण कृत्रिम बुद्धि के विकास से मानव जाति का अंत हो सकता है''।

(अनुवादः श्रीमती संगीता चतुर्वेदी) ■

हमारे गुंजायमान मित्र

अंकिता रे

मधुमक्खियां और अन्य परागण करने वाले कीट हमारे पारिस्थितिक तंत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। खाद्य उत्पादन का एक तिहायी परागण करने वालों पर ही निर्भर है। परागण करने वालों के बिना खाद्य उत्पादन खतरे में आ जाएगा क्योंकि हाथ से परागण अत्यंत धीमा होता है, इसमें मेहनत भी बहुत होती है और यह आर्थिक रूप से सुसंगत भी नहीं है। विश्व भर में मधुमक्खियों द्वारा होने वाले परागण का आर्थिक महत्व अनुमानतः 311 बिलियन डालर वार्षिक है! यह अभिलिखित किया गया है कि मधुमक्खियों की संख्या घट रही है।

जब हम बगीचे में या सुंदर चमकदार पुष्पों के पौधों से सजी बालकनी में बैठे होते हैं, तब अकसर अपने पंखयुक्त मित्रों – मधुमक्खियों की भनभनाहट सुनते हैं। मधु मक्खियां गण हाइमेनोप्टेरा (हाइमन = झिल्लीयुक्त, प्टेरा = पंख) में आती हैं; अन्य सदस्यों में ततैया, सॉ मक्खियां और चीटियां आती हैं। हम जब भी 'मक्खी' शब्द सुनते हैं, मधुमक्खियों के बारे में सोचना शुरू कर देते हैं। लेकिन वास्तव में, शहद का उत्पादन करने वाली मक्खियों के अलावा, जो कि वंश *एपिस* में आती हैं, अन्य अनेक प्रकार की मक्खियां (आमतौर से नॉन–एपिस मक्खियों के नाम से ज्ञात) भी होती हैं जो शहद नहीं बनातीं बल्कि केवल परागणकर्ताओं की भूमिका निभाती हैं। (भारतीय मधुमक्खियां वैज्ञानिक रूप से *एपिस सेरेना इंडिका* कहलाती हैं।) मधुमक्खियां कालोनी बनाती हैं और सामाजिक जीवन जीती हैं जबकि अन्य कुल अकेले रहते हैं और एकाकी जीवन जीते हैं। अन्य संबंधियों में मेगाचिलीडेई (लीफ कटर मक्खियां), हेलीक्टीडेई (स्वेट मक्खियां), एन्ड्रीनाइडेई (माइनर मक्खियां), भौंरे, कारपेंटर मक्खियां और डंकरहित मक्खियां शामिल हैं, जो परागण में काफी सहयोग देती हैं।

अन्य मक्खियां मधुमक्खियों से कैसे भिन्न होती हैं?

मधुमक्खियों (*एपिस* प्रजाति) और नॉन–*एपिस* मधुमक्खियों में कुछ आकारीय (शारीरिक) विभिन्नताएं होती हैं। मधुमक्खियों, भौंरों में पराग कणों को लेने के लिए उनके पिछले पैरों पर विशेषीकृत कोष जैसी रचनाएं होती है जिन्हें कॉरबिकुला (आमतौर से पॉलेन बास्केट कहते हैं) कहते हैं, जहां वे पराग कण एकत्रित करती हैं और अपने बच्चों को पोषित करने के लिए अपने छत्ते में ले जाती हैं। दूसरी ओर कुछ मक्खियां, उदाहरण के लिए मेगाचिलीडेई कुल की मक्खियां अपने उदर के नीचे पराग कण ले जाती हैं, हेलीक्टीडेई और एन्ड्रीनाइडेई कुल की मक्खियां अपने पिछले पैरों पर इन्हें ले जाती हैं। मधुमक्खियां डंसने के बाद जीवित नहीं रहतीं क्योंकि उनका डंक कंटीला होता है; एक बार डंक के त्वचा में धंसने के बाद मक्खी इसे बाहर खींचने में सक्षम नहीं होती और मर जाती है। अन्य डंकधारी मक्खियां आमतौर से मरती नहीं क्योंकि उनका डंक कंटीला नहीं होता। इसके अतिरिक्त, मधुमक्खियों के डंक के विपरीत, जो कि दर्द भरा होता है, अन्य कुलों की मक्खियों के डंक हल्के होते हैं। प्रकृति ने अन्य नॉन–*एपिस* मक्खियों की तुलना में मधुमक्खियों को एक अच्छी सुरक्षा विधि प्रदान की है, संभवतः इसलिए कि मधुमक्खियों को अपने

अंकिता रे ने दिल्ली विश्वविद्यालय से प्राणिविज्ञान में स्नातक एवं स्नातकोत्तर किया है। वह अभी पीएच डी कर रही हैं। ईमेलः rayankita0208@gmail.com

छत्ते में प्राकृतिक परभक्षियों से शहद की रक्षा करनी होती है। *एपिस* और नॉन–*एपिस* मक्खियों में अन्य अनेक आकारीय (शारीरिक) भिन्नताएं होती हैं, ऊपर वर्णित भिन्नताएं गैर तकनीकी हैं।

घोंसला बनाने के पैटर्न की तुलना

मधुमक्खियां उच्च सामाजिक जीवन जीती हैं। वे अपने छत्ते गुफाओं, चट्टानों की दरारों, खोखले वृक्षों और कंक्रीट की मुंडेरों के नीचे बनाती हैं। उनके छत्ते मोम के षट्कोणीय उपखंडों या कोशिकाओं में विभाजित होते हैं जिनमें लार्वा रहते हैं और शहद एवं पराग कण संग्रहित रहते हैं। लार्वा या बच्चे फूलों से एकत्रित किए गए मकरंद और पराग कणों से बने शहद को खाते हैं। केवल रानी मक्खी शाही जेली खाती है, जो कामगार मक्खियों द्वारा उत्पादित पोषक पदार्थ है जिसका उपयोग लार्वा के पोषण के साथ साथ वयस्क रानियों के लिए किया जाता है। नॉन–*एपिस* मक्खियां एकाकी जीवन जीती हैं। उनके छत्ते में इस स्तर का संगठन नहीं होता। वे आमतौर से जमीन में रहने वाली मक्खियां हैं, जो अपना घर खोखले मृदु काष्ठ की गुहाओं या जमीनी सुरंगों में बनाती हैं। घर बनाने के लिए प्रयोग किए जाने वाले पदार्थ हैं पत्तियां, बाल और पौधों का रेजिन आदि।

मधुमक्खियों का जीवन चक्र

मधुमक्खियों के जीवन चक्र में चार अवस्थाएं होती हैं – अंडा, लार्वा, प्यूपा और वयस्क। वयस्कों में रानी, कामगार और ड्रोन होते हैं। रानी अंडे देने का एकमात्र काम करती हैं। कामगार मादा होती हैं और छत्ते के रखरखाव के लिए आवश्यक सभी काम करती हैं अर्थात, घोंसला बनाना, बच्चों को खिलाना और छत्ते की देखभाल करना जबकि ड्रोन नर होते हैं जिनका काम मादा को ढूंढना और उसके साथ जोड़ा बनाना होता है। एक छत्ते में केवल एक रानी मौजूद होती है। रानी को कामगारों द्वारा शाही जेली से पोषित किया जाता है। निषेचन के बाद, रानी मक्खी अंडे देती है। ड्रोन नर, अनिषेचित अंडों से निकलते हैं, और मादा निषेचित अंडों से निकलती हैं और कामगार बन जाती हैं। कालोनी के अंदर कामगारों के बीच काम का बंटवारा होता है जैसे परिचारिकाएं और भोजन ढूंढने वाली। परिचारिकाएं छत्ते को बनाती हैं, साफ करती हैं और सुरक्षा करने के साथ साथ बच्चों का पोषण करती हैं; भोजन की खोज करने वाली छत्ते से बाहर घूमती हैं और मकरंद एवं पराग कणों की खोज

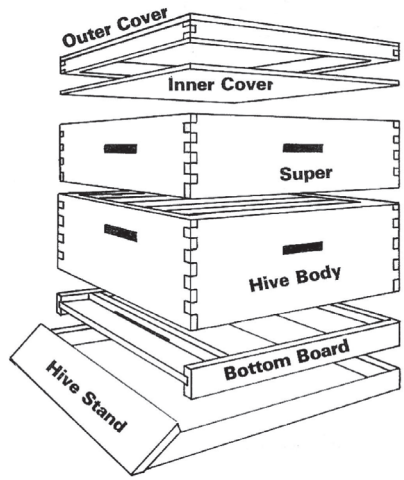

एक प्रारूपिक कृत्रिम मधुमक्खी का छत्ता (स्रोत: www.ukey.edu)

में फूलों का दौरा करती हैं। श्रम का ऐसा विभाजन नॉन–एपिस मक्खियों में नहीं होता क्योंकि वे एकल प्रकृति की होती हैं।

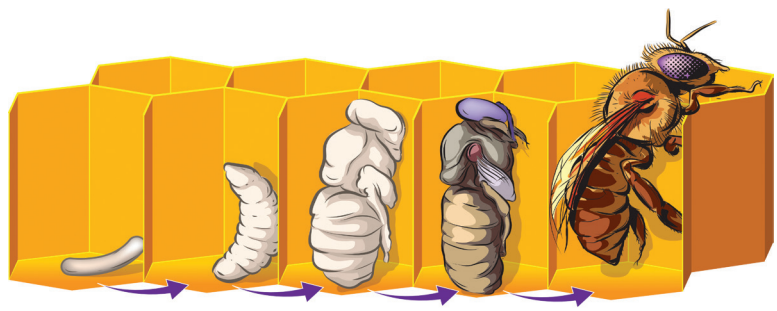

मधुमक्खियों का जीवन चक्र

मधुमक्खियों द्वारा ढूंढे गए फूलों के मकरंद से शहद बनाया जाता है। भक्षण मकरंद को अमाशय के क्राप में संग्रहित कर लिया जाता है और एंजाइम उस पर क्रिया करते हैं जिससे उसका रासायनिक संघटन बदल जाता है। छत्ते में लौटने के बाद मक्खियां मकरंद को उल्टी के जरिए दूसरी मक्खियों को दे देती हैं और इस प्रक्रिया को तब तक दोहराया जाता है जब तक यह छत्ते के मधुकोषों में जमा नहीं हो जाता। मकरंद अब भी चिपचिपा होता है। मधुकोषों को पंखों से हवा करके अतिरिक्त जल निकाल दिया जाता है। जब अधिकांश जल वाष्पित हो जाता है मक्खियां मधुकोषों को अपने उदर से निकलने वाले स्राव से सील कर देती हैं जो जम कर मोम बन जाता है।

मधुमक्खीपालक मधुमक्खी पालन करते हुए

मधुमक्खी पालन

मधुमक्खीपालन या एपीकल्चर मधुमक्खियों की कालोनियों का प्रबंधन है। शहद के एकत्रण और मोम जैसे अन्य मधुमक्खी उत्पादों के लिए एपीकल्चर किया जाता है। मधुमक्खियों की सभी प्रजातियों को पाला नहीं जा सकता क्योंकि उनमें से अनेक बहुत उग्र होती हैं। मधुमक्खी पालन में प्रयोग की जाने वाली मधुमक्खियों की प्रजातियां हैं एपिस डोरसाटा, एपिस मिलीफेरा, एपिस इंडिका, एपिस फ्लोरिया। एक घरेलू मानव–निर्मित मधुमक्खी की कालोनी में छत्ते के लिए एक स्टैंड, तल पर रखा बोर्ड और शहद के छत्ते की कोशिकाओं के आठ से दस समानांतर फ्रेम होते हैं जिनमें अंडे, लार्वा और प्यूपा होते हैं। छत्ते का स्टैंड कालोनी का आधार होता है और पूरी संरचना को जमीन से ऊपर उठाए रखता है। तल पर रखा बोर्ड कालोनी के फर्श का काम करता है और भोजन ढूंढने वालों के लिए उड़ने और उतरने वाले प्लेटफार्म का काम करता है। छत्ते में रानी वर्जक भी होता है जिसमें से कामगार मधुमक्खियां तो जा सकती हैं लेकिन रानी को पारगमन नहीं करने देता जिससे वह हनी सुपर्स (व्यापारिक या अन्य प्रबंधित मधुमक्खी के छत्तों का हिस्सा जिसका उपयोग शहद एकत्रित करने के लिए होता है) तक न पहुंच सके। प्रमुख रचना में समानांतर फ्रेम होते हैं। दोनों ओर के बाहरी मधुकोष केवल लंबे समय तक शहद और पराग के संग्रह के लिए होते हैं। प्रजनन कक्ष के ऊपर अलग डिब्बे रखे जाते हैं जिनमें मधुमक्खियों द्वारा बनाया गया अधिवेष बकाया शहद संग्रहित किया जाता है। इस प्रकार बिना मधुमक्खियों को छेड़े शहद निकाल लिया जाता है।

संरक्षण और जागरूकता

मधुमक्खियां और अन्य परागण करने वाले कीट हमारे पारिस्थितिक तंत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। खाद्य उत्पादन का एक तिहायी परागण करने वालों पर ही निर्भर है। परागण करने वालों के बिना खाद्य उत्पादन खतरे में आ

जाएगा क्योंकि हाथ से परागण अत्यंत धीमा होता है, इसमें मेहनत भी बहुत होती है और आर्थिक रूप से सुसंगत भी नहीं है। विश्व भर में मधुमक्खियों द्वारा होने वाले परागण का आर्थिक महत्व अनुमानतः 311 बिलियन डालर वार्षिक है! यह अभिलिखित किया गया है कि मधुमक्खियों की संख्या घट रही है। मधुमक्खियों की घटती आबादी के बहुत से कारण हो सकते हैं जैसे कि आवासों का विखंडन, कीटनाशकों का प्रयोग, जलवायु परिवर्तन और परजीवियों एवं रोगकारकों का प्रकोप। अनेक क्षेत्रों में बड़ी मात्रा में कीटनाशकों का उपयोग मधुमक्खियों की घटती जनसंख्या का प्रमुख कारण है। मधुमक्खियों पर कीटनाशकों के अनेक नकारात्मक प्रभाव होते हैं और इनमें कायिकी प्रभाव भी शामिल हैं जो विकास की दर को भी बदल देते हैं जैसे कि वयस्क अवस्था आने में देरी, परिवहन और सीखने के व्यवहार पर प्रभाव, पोषण संबंधी बर्ताव में व्यवधान, फूलों एवं घोंसले के स्थान या स्थानिक अनुस्थिति की पहचान में अक्षमता।

मधुमक्खीपालक मधुमक्खी शहद एकत्रित करते हुए

हम कैसे सहायक हो सकते हैं

- एक परागण बाग लगाएं। इसमें स्वदेशी फूलों के पौधे, झाड़ियां और जंगली फूलों की किस्में हों जो अनंतर में सब मौसमों में पुष्पित होते रहें। उग आयी शाकों, झाड़ियों और बाड़ों को न उखाड़ें क्योंकि ये मधुमक्खियों के लिए घर बनाने और भोजन ढूंढने के संभावित स्थान हैं।
- एकाकी मक्खियों को घर बनाने के लिए खोखले लकड़ी के लट्ठे और डिब्बे आदि प्रदान करें।
- कीटनाशकों का प्रयोग न करें, अगर जरूरी हो तो कार्बनिक कीटनाशकों का प्रयोग करें जब परागक बहुत कम सक्रिय हों अर्थात सबेरा होने से पहले और सूरज डूबने के बाद।
- बाग में स्वदेशी पुष्पित पौधे लगाएं। स्वदेशी परागक और स्वदेशी पौधे समय के साथ एक दूसरे के प्रति अनुकूलित हो जाते हैं, सही पौधे लगाने का परागकों पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ता है।

मधुमक्खियों के लिए पुष्पों का बगीचा

- परागकों और उनके फूलों के बारे में और अधिक जानने के लिए परागक मित्र संगठन में जाएं।

मधुमक्खियों के बारे में कुछ रोचक तथ्य

- केवल मादा मक्खी डंक मारती है। मादा का अंड निक्षेपक या अंडे देने वाला अंग सुरक्षा अस्त्र के रूप में रूपांतरित होता है।
- मधुमक्खियां खाद्य स्रोत और छत्ते के बीच की दूरी छत्ते के अन्य सदस्यों को बताने के लिए 8 के आकार में दोलन नृत्य करती हैं।
- मक्खियां शानदार उड़ाकू होती हैं। वे 200 बार प्रति सेकेंड तक अपने पंखों को हिला कर 25 किमी प्रति घंटे की रफ्तार से उड़ सकती हैं।
- वैज्ञानिकों ने पाया है कि मक्खियों के डंक से निकलने वाला जहर, एचआईवी के विषाणु के ऊपरी आवरण को नष्ट करके, उसे मार सकता है।
- खाद्य स्रोत और छत्ते के बीच दिशा का पता लगाने और कोणों को मापने के लिए सूरज का उपयोग दिक्सूचक के रूप में करती हैं।
- मधुमक्खियों में छत्ते के अन्य सदस्यों से प्राप्त संकेतों की पहचान करने और आहार खोजने के लिए गंध की पहचान करने के लिए सूंघने की विलक्षण क्षमता होती है।

(अनुवादः डॉ विनीता सिंघल) ■

लेख आमंत्रित हैं

ड्रीम 2047

विज्ञान प्रसार, अपनी मासिक पत्रिका *ड्रीम 2047* के लिए विज्ञान लेखकों से लोकप्रिय विज्ञान पर मूल लेखों को आमंत्रित करता है। वर्तमान में इस पत्रिका के 50,000 से अधिक सदस्य हैं। अधिकतम 3000 शब्दों सहित लेख हिंदी या अंग्रेजी में भेजे जा सकते हैं। नियमित स्तंभों i) स्वास्थ्य ii) विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की अभिनव उपलब्धियां के लिए भी लेखों का स्वागत है। अगर लेख को प्रकाशन के लिए स्वीकार कर लिया जाता है तो विज्ञान प्रसार के मानक के अनुसार लेखक (कों) को मानदेय दिया जाएगा। अधिक जानकारी के लिए देखें www.vigyanprasar.gov.in या ई-मेल करें dream@vigyanprasar.gov.in

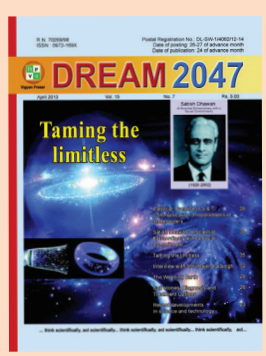

विज्ञान प्रसार वेबसाइट

विज्ञान प्रसार के प्रकाशनों को ऑनलाइन प्राप्त करने के लिए वेबसाइट के डिजिटल लाइब्रेरी भाग पर रजिस्टर करें। आप विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संबंधी प्रश्नों एवं उनके हल के लिए विचार-विमर्श फोरम का भी उपयोग कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी आधारित वीडियो, विज्ञान रेडियो धारावाहिक, ऑनलाइन विज्ञान क्विज, गतिविधि प्रयोगों एवं अन्य कार्यक्रमों को जानने के लिए देखें www.vigyanprasar.gov.in

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की अभिनव उपलब्धियां

बिमान बसु

जब भी हम डीएनए के संबंध में विचार करते हैं तो अधिकतर एक घुमावदार सीढ़ी जैसी संरचना, वही हमारी सुपरिचित दोहरी कुण्डली की तस्वीर दिमाग़ में उभरती है। मगर लंबे समय से यह ज्ञात रहा है कि डीएनए अन्य आकृतियों में भी पाया जाता है, हालांकि मानव कोशिकाओं में अन्य रुप के डीएनए का संसूचन अभी तक नहीं हुआ था। अब मानव कोशिकाओं में एक नए रूप में डीएनए की खोज से जुड़ी खबर आई है। यह एक चार लड़ियों की गांठ जैसी संरचना है जिसे 'आई–मोटिफ' नाम दिया गया है।

डार्कमैटरविहीन मंदाकिनी की खोज

अदृश्य द्रव्य (डार्क मैटर) एक रहस्यमय तत्व है जिसमें द्रव्यमान तो है किन्तु दिखाई नहीं देता क्योंकि यह प्रकाश के साथ अन्योन्य क्रिया नहीं करता। डार्क मैटर के अस्तित्व का प्राथमिक प्रमाण उन परिकलनों से प्राप्त हुआ जिन्होंने यह दर्शाया कि अनेक मंदाकिनियां घूमने के बजाए एक दूसरे से दूर भाग रही होती अथवा या तो वे निर्मित ही नहीं होतीं या फिर उस तरह गति नही करती जिस प्रकार कि वे करती हैं यदि उनमें बड़े परिमाण में अदृश्य द्रव्य विद्यमान न होता। तथ्य यह है कि अभी हाल ही तक यह माना जाता था कि मंदाकिनियां एवं अदृश्य द्रव्य एक साथ रहते हैं और एक के बिना दूसरे का अस्तित्व संभव नहीं है। अदृश्य द्रव्य के बिना हमारे विश्व के सैद्वांतिक मॉडल भरभरा कर ढ़ह जाऐंगे। किंतु इस संकल्पना को कि मंदाकिनी निर्माण के लिए अदृश्य द्रव्य एक अनिवार्य घटक है अब एक ऐसी दूरस्थ मंदाकिनी की खोज से चुनौती मिल रही है जिसमें अदृश्य द्रव्य या तो है ही नहीं अथवा इसका परिमाण नगण्य है। अदृश्य द्रव्य को देखा या छुआ नहीं जा सकता, किंतु, ब्रह्मांड में इसका परिमाण सामान्य द्रव्य की तुलना में पांच गुने से अधिक है। खगोलज्ञ इस विषय में इसके गुरुत्वाकर्षण प्रभाव के कारण जानते हैं, इसके संसूचन का उनके पास कोई और तरीका नहीं है।

NGC 1052&DF2 नामक इस विरल, पारदर्शी मंदाकिनी की खोज खगोलज्ञों द्वारा न्यू मैक्सिको स्थित ड्रैगनफ्लाई टेलीफोटो ऐरे नामक टेलीस्कोप का उपयोग करके की गई जो कैमरे के विभिन्न भागों को जोड़ कर अत्यंत धुंधली मंदाकिनीवत् संरचनाओं के संसूचन के लिए बनाया गया था। फिर खगोलज्ञों ने हब्बल अंतरिक्ष टेलिस्कोप के साथ–साथ जेमिनी नॉर्थ तथा केक्क वेधशाला, हवाई का उपयोग करके और अधिक डैटा एकत्रित करके विश्लेषण किया (नेचर, 29 मार्च 2018 । DOI:10-1038/nature25676) यह पहली मंदाकिनी है जिसकी पहचान एक ऐसी मंदाकिनी के रूप में हुई है जिसमें या तो अदृश्य द्रव्य है ही नहीं या फिर न के बराबर है।

इस अध्ययन के नेता येल विश्वविद्यालय, न्यू हैवन, कनैक्टिकट, यूएसए के पीटर कर डोक्कम के अनुसार, NGC 1052-DF2 उतनी ही विशाल है जितनी हमारी आकाशगंगा, किंतु इसकी ओर खगोलज्ञों का ध्यान इसलिए नहीं गया क्योंकि इसमें तारों की संख्या आकाशगंगा में तारों की संख्या से 200 गुना कम है। इसके अतिरिक्त इसमें अदृश्य द्रव्य खगोलज्ञों द्वारा अपेक्षित परिमाण से 400 गुना कम है। विशाल आकार और धुंधली दिखाई पड़ने के कारण खगोलज्ञ NGC 1052-DF2 का वर्गीकरण 'अतिविसरित मंदाकिनी' के रूप में करते हैं।

यह विशाल, धुंधली दिखाई पड़ने वाली मंदाकिनी इतनी विसरित है कि खगोलज्ञ इसे ''सीथ्रू'' गैलेक्सी कहते हैं, क्योंकि वे इसके पीछे की दूरस्थ मंदाकिनियों को स्पष्ट देख सकते हैं। इसमें अदृश्य द्रव्य का न होना इस तथ्य की व्याख्या कर सकता है। (नासा, ई एस ए एवं पी. वान डोक्कम/येल विश्वविद्यालय)

वान डोक्कम और उनके दल ने इस मंदाकिनी की खोज विशेष रूप से ऐसी ही मंदाकिनियों के अध्ययन हेतु अभिकल्पित न्यू मैक्सिको स्थित टेलीस्कोप ड्रैगनफ्लाई टेलीफोटो ऐरे द्वारा की। इसके बाद उन्होंने हवाई की डब्ल्यू एम केक्क वेधशाला का उपयोग इस मंदाकिनी के ग्लोबुलर क्लस्टर नामक 10 विशाल तारक समूहों की गति मापने के लिए किया। अध्ययन से पता चला कि ग्लोबुलर क्लस्टर अपेक्षाकृत कम, 37,000 किलोमीटर प्रति घंटा से भी कम, चाल से चल रहे थे। इसके विपरीत मंदाकिनी के बाह्यांचल में, जहां अदृश्य द्रव्य मौजूद है, तारे और तारक

लेखक सीएसआईआर-निस्केयर द्वारा प्रकाशित लोकप्रिय विज्ञान मासिक साइंस रिपोर्टर के पूर्व संपादक हैं। वह 1994 में एनसीएसटीसी के विज्ञान लोकप्रियकरण में राष्ट्रीय विजेता हैं। उन्होंने 45 से अधिक लोकप्रिय विज्ञान पुस्तकें लिखी हैं। ई-मेलः bimanbasu@gmail.com

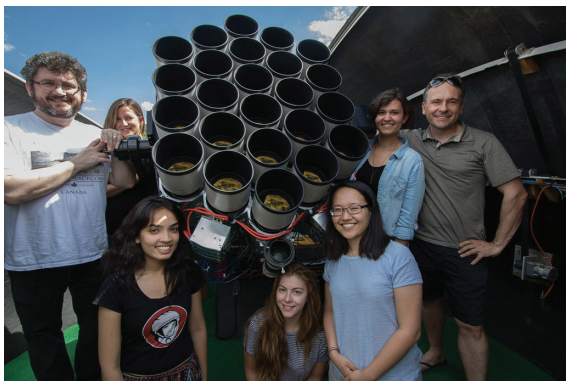

ड्रैगन फ्लाइ टेलिफोटो ऐरे एक रोबोटी आकाश दर्शक यंत्र है, जो न्यू मैक्सिको से, मिलकर काम करने वाले अनेक नियमित कैनन लेन्सों के माध्यम से अंतरिक्ष का अवलोकन करता है (श्रेयः टोरंटो विश्वविद्यालय एवं येल विश्वविद्यालय)

समूह कम से कम तीन गुना अधिक तीव्र गति से चल रहे थे। इन मापनों से, दल ने मंदाकिनी का द्रव्यमान परिकलित किया। वान डोक्कम व्याख्या करते हुए कहते हैं, ''यदि इस मंदाकिनी में अदृश्य द्रव्य है भी तो बहुत कम है। मंदाकिनी का सकल द्रव्यमान इसमें विद्यमान तारों के द्रव्यमान का योग करने से प्राप्त हो जाता है और अदृश्य द्रव्य की मौजूदगी की कोई संभावना नज़र नहीं आती।''

इसके बाद अन्वेषकों ने नासा के हब्बल अंतरिक्ष टेलीस्कोप तथा हवाई की जेमिनी वेधशाला का उपयोग किया और इस अनन्य मंदाकिनी के विषय में अधिक विस्तृत जानकारी प्राप्त की। जेमिनी से प्राप्त प्रेक्षणों ने उद्घाटित किया कि यह मंदाकिनी अन्य मंदाकिनियों के साथा अन्योन्य क्रियाओं का कोई संकेत नहीं देती है। हब्बल से लिए गए प्रेक्षणों ने ग्लोबुलर क्लस्टरों (गोलाकार तारागुच्छों) को पहचानने और मंदाकिनी की दूरी परिशुद्वता से मापने में सहायता की। हब्बल से प्राप्त चित्रों ने मंदाकिनी की असाधारण आकृति भी स्पष्ट की।

लगभग 6.5 करोड़ प्रकाशवर्ष की दूरी पर विद्यमान स्पष्ट दिखाई न पड़ने वाली इस मंदाकिनी में न तो दृष्टिगोचर होने वाला केन्द्रीय क्षेत्र है और न ही कुंडलित भुजाएं और चकती जो कि कुंडलित मंदाकिनियों के प्रारूपिक लक्षण होते हैं। किंतु यह दीर्घवृत्ताकार मंदाकिनी की तरह भी दिखाई नहीं पडती। इस मंदाकिनी में केंद्रीय ब्लैकहोल की मौजूदगी का भी कोई प्रमाण नहीं मिलता। गोलाकार तारागुच्छों के रंग के आधार पर पता चलता है कि यह मंदाकिनी तगभग 10 अरब वर्ष पुरानी है।

प्लास्टिक प्रदूषण के सफाए के लिए नवीन प्लास्टिक भक्षक एंज़ाइम

प्लास्टिक एक सुविज्ञात एवं व्यापक प्रदूषक है जो पृथ्वी के पारिस्थितिकी तंत्र की अकथनीय हानि का कारण है। बाजार में आने के एक शताब्दी से भी कम अवधि में प्लास्टिक आधुनिक समाज के लिए अनिवार्य हो गया है। ऐसा इनके अद्भुत बहुविध उपयोगों तथा अल्प उत्पादन लागत के कारण हुआ है। तथापि, यह भी व्यापक रूप में माना जा रहा है कि अपने अतिदीर्घ जीवन काल के चलते अधिकांश संश्लेषित प्लास्टिक भीषण वैश्विक प्रदूषण समस्या बन गए है, विशेषकर समुद्री पारिस्थितिकी तंत्रों के लिए तो ऐसा हुआ ही है। पर्यावरणविदों ने सागरों में छः विशाल तैरते हुए कचरे के ढेरों से निर्मित धब्बों की पहचान की है अधिकाशंतः फेंकी गई प्लास्टिक बोतलें। विश्वभर में प्रतिमिनट लगभग 10 लाख प्लास्टिक की बोतलें बेची जा रही हैं। इनमें से केवल 14 प्रतिशत का पुनर्चक्रण होता है। अधिकांश अंततः सागर में पहुंच जाती हैं जहां वे दूरस्थ स्थानों तक को प्रदूषित करती हैं और समुद्री जीवन तथा समुद्री खाद्य पदार्थ खाने वाले लोगों को नुकसान पहुंचाती हैं। यहां तक कि आर्कटिक जैसे वे क्षेत्र जो सभ्यता के उजाले से बहुत दूर हैं, सुरक्षित नहीं हैं। वास्तव में धीरे–धीरे हम अपने कचरे से अनेक प्राकृतिक पारितंत्रों का दम घोटे दे रहे हैं। अनुमान यह है कि मछलियां, पक्षी तथा अन्य जंतु सभी अनजाने में समुद्र में यहां वहां बिखरे हुए पांच ट्रिलियन टन प्लास्टिक का उपयोग कर लेते हैं और अक्सर काल के गाल में समा जाते हैं। विशेषज्ञों का अनुमान है कि वर्ष 2050 तक सागर में अपशिष्ट प्लास्टिक का द्रव्यमान उतना ही हो जाएगा जितना मछलियों का है।

यद्यपि पोलिइथेलीन टेरेफ्थैलैट, जो सामान्य भाषा में PET (पेट) कहलाते हैं, बहुउपयोगी होते हैं किंतु प्राकृतिक निम्नीकरण के प्रति उनका प्रतिरोध जंतु और वनस्पतियों, विशेषकर समुद्री पारितंत्रों में विद्यमान जीवों के लिए गंभीर जोखिम प्रस्तुत करता है। पेट, सर्वाधिक परिमाण में उत्पादित किए जाने वाले कृत्रिम बहुलकों में से एक हैं तथा फेंके गए पैकिंग एवं वस्त्रों के रूप में इनकी पर्यावरण में आश्चर्यचकित करने वाली दर से वृद्धि हो रही है। वह गुण जो पेट को इतना उपयोगी बनाते हैं वही इनमें जैवनिम्नीकरण के प्रति भी अदभुत प्रतिरोध प्रदान करते है जिसके कारण यह वातावरण में शताब्दियों तक बने रह सकते है।

प्लास्टिक अपशिष्ट के उपयुक्त निराकरण की समस्या लंबें समय से वैज्ञानिकों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किए हुए है। अब ब्रिटेन के पोर्ट्समाउथ विश्वविद्यालय तथा अमरीकी ऊर्जा विभाग की राष्ट्रीय नवीकरणीय ऊर्जा प्रयोगशाला के अंवेषकों ने संयोगवश एक ऐसे एंजाइम का विकास किया है जिसमें प्लास्टिक बोतलों को विघटित करने की क्षमता है। यह अभिनव खोज पहली बार वैश्विक प्लास्टिक प्रदूषण संकट का हल बोतलों के संपूर्ण पुनर्चक्रण के द्वारा संभव बनाने में सहायता कर सकती है (प्रोसिडिंग्स ऑफ द नेशनल एकेडमी ऑफ साइंसेस, 12 अप्रैल 2018 । doi.org/10.1073pnas.1718804115)।

इस नवीन खोज की प्रेरणा, 2016 में जापान की एक अपशिष्ट क्षेपण भूमि में पहली बार आइडियोनेल्लासैकैयंसिस नामक बैक्टीरिया की खोज से प्राप्त हुई थी यह बैक्टीरिया प्लास्टिक के एक सर्वसामान्य रूप पेट का भक्षण करता है जिसका उपयोग पानी की बोलतों, आहार धारकों तथा पॉलियेस्टर में होता है। वैज्ञानिकों ने अब आइ–सैकैयंसिस द्वारा उत्पन्न महत्वपूर्ण एंजाइम की विस्तृत संरचना ज्ञात कर ली है और इसको उन्होंने पेटेज़ (PETase) नाम दिया है। एंज़ाइम पेटेज़ पर उच्चशक्ति एक्स किरणों की बमबारी द्वारा इसकी संरचना का अभिलक्षणन करने के बाद शोधदल ने पेटेज की संरचना में थोडा परिवर्तन किया ताकि इसकी तुलना एक अन्य एंज़ाइम से की जा सके जो क्युटिन (एक बहुलक जिसका उपयोग पौधों में एक संरक्षी परत के रूप में होता है) को विघटित करता है। इस प्रक्रम ने अप्रत्याशित रूप से पेट को विघटित करने की पेटेज की क्षमता में 20 प्रतिशत से अधिक की वृद्धि कर दी। अन्वेषकों के अनुसार, यह नवीन उत्परिवर्ती एंज़ाइम पेट को विघटित करने में मात्र कुछ दिन ही लेता है जबकि इसके स्वाभाविक विघटन में 450 वर्ष लगते हैं। अन्वेषकों को आशा है कि विघटन की गति को और अधिक बढ़ाया जा सकता है और तब यह बड़े पैमाने पर किया जा सकने वाला व्यवहार्य प्रक्रम को जाएगा। पोर्ट्समाउथ तथा कोलोराडो, अमरीका, की राष्ट्रीय नवीकरणीय ऊर्जा प्रयोगशाला के अन्वेषकों ने इस विशिष्ट उत्परिवर्ती एंज़ाइम के पेटेंट के लिए आवेदन कर दिया है।

इस अनुसंधान का नेतृत्व करने वाले पोर्ट्समाउथ विश्वविद्यालय, यूके के प्रोफेसर जोहन मैक्गीहन का कहना है, ''हमें उम्मीद है कि इस एंज़ाइम का उपयोग प्लास्टिक को वापस उसके मूल अवयवों में विघटित करने के लिए किया जा सकता है और इस तरह हम प्लास्टिक को शब्दशः पुनर्चक्रित कर सकेंगे। इसका तात्पर्य यह है कि हमें प्लास्टिक बनाने के लिए और अधिक पेट्रोलियम का खनन नहीं करना होगा और हम अपने पर्यावरण में प्लास्टिक की मात्रा को कम कर सकेंगे।''

जीनीय रूप से परिवर्धित पादप से अधिक परिमाण में मलेरियारोधी यौगिक की प्राप्ति

पीड़कनाशियों के व्यापक उपयोग तथा मच्छरों का प्रजनन रोकने के लिए उठाए गए अन्य कदमों के बावजूद मलेरिया एक वैश्विक स्वास्थ्य समस्या बना हुआ है। विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यूएचओ) के अनुसार अकेले वर्ष 2017 में ही विश्व के 91 देशों के लगभग 21.6 करोड लोग मलेरिया से प्रभावित हुए जिनमें से 445,000 लोगों की मृत्यु हो गई।

प्लाज़्मोडियम फाल्सीपैरम सर्वाधिक व्याप्त मलेरिया परजीवी है और यह विश्वभर में मलेरिया के कारण होने वाली सबसे अधिक मौतों के लिए उत्तरदाई हैं। आर्टिमिसिनिन नामक यौगिक प्रभावी मलेरियारोधी यौगिक है और इसका संश्लेषण चीनी औषधीय पादप आर्टीमिसिया एन्नुआ से किया जाता है जिसका सामान्य नाम स्वीट वोर्मवुड है। WHO

आर्टिमिसिया एन्नुआ की खेती (श्रेय : यिंग ल्यू, शंघाई ग़िज़न हुआ न्यूज़ एजेंसी)

के अनुसार, मलेरिया की सर्वोत्तम चिकित्सा, विशेषकर पी. फाल्सीपेरम के कारण हुए रोग में, आर्टीमिसिनिन आधारित संयोजन थिरैपी (ACT) है।

वर्तमान में ACT के लिए आर्टिमिसिनिन की आपूर्ति मुख्यतः इस यौगिक के कृष्यं उत्पादन पर निर्भर करती है। तथापि, पादप आधारित उत्पादन, ए.एन्नुआ की पत्तियों में आर्टिमिसिनिन के निम्न परिमाण (0.1% से 1.0% शुष्क भार) के कारण विश्व की माँग को पूरा नहीं कर पाता। वैकल्पिक रूप में आर्टिमिसिनिन के उत्पादन के लिए एक अर्द्ध–कृत्रिम तंत्र का उपयोग किया जा सकता है जिसमें इसके पूर्ववर्ती यौगिक आर्टिमिसिनिक अम्ल के संश्लेषण के लिए ख़मीर को अभियंत्रित किया जाता है। परन्तु, आर्टिमिसिनिन का अर्द्ध कृत्रिम उत्पादन खर्चीला होता है और इसलिए यह अभी कृष्य उत्पादन का स्थान नहीं ले सकता। अतः अन्य संभावित मलेरियारोधी यौगिकों की पहचान किये जाने तथा ए.एन्नुआ में आर्टिमिसिनिन की मात्रा में वृद्धि हेतु प्रयास किए जाने की बहुत आवश्यकता है।

अब, शंघाई के जियो टोंग विश्वविद्यालय के पादप विज्ञानी केंग्जुआन टैंग तथा उनके सहकर्मियों ने आर्टिमिसिया पादप को जीनीय रूप से परिवर्द्धित करके इसकी पत्तियों में प्राकृतिक रूप से उत्पन्न आर्टिमिसिनिन की मात्रा को तीन गुने से भी अधिक करने में सफलता प्राप्त कर ली हैं। अन्वेषकों ने 1.74 गिगाबेस के ए. एन्नुआ जीनोम की उच्च गुणवत्ता की ड्राफ्ट असेंबली जनित की जिसमें 63,226 प्रोटीन–कोडित जीन थे जो अनुक्रमित पादप प्रजातियों में संभवतः सबसे बड़ी संख्या है। इसके विशाल आकार और अत्यधिक जटिलता के कारण इसके जीनोम अनुक्रमण को पूरा करने में कई वर्ष लगे। इसके बाद अंवेषकों ने आर्टिमिसिनिन उत्पादन के लिए परम महत्व की तीन जीनों की पहचान की। इन जीनों की सक्रियता में वृद्धि हेतु किए गए जीन परिवर्द्धन ने पत्तियों में आर्टिमिसिनिन का स्तर 0.1%-1% से बढ़ाकर 3.2% कर दिया (मॉलिकुलर प्लांट, 24 अप्रैल 2018। DOI : 10-1016/mol p. 2018-03-015)। तथापि इस खोज का प्रभाव वाणिज्यिक उत्पादन पर पड़ने से पहले व्यापक क्षेत्र परीक्षणों की आवश्यकता होगी, ताकि यह प्रदर्शित किया जा सके कि अभियंत्रित पादपों का निष्पादन क्षेत्र परीक्षणों में भी उतना ही प्रभावी होता है जितना कि प्रायोगिक दशाओं में पाया गया था। इसके अतिरिक्त, जीनीय रूप से परिवर्द्धित पादप के वाणिज्यिक उत्पादन से पहले नियामक अनुमति भी प्राप्त करनी होगी।

मानव कोशिकाओं में विचित्र डी एन ए की खोज

जब भी हमारे मस्तिष्क में डी एन ए का विचार आता है तो अधिकाशंतः एक सुप्रसिद्ध दोहरी कुंडली, एक घुमावदार सीढ़ी जैसी संरचना का चित्र दिमाग़ में उभरता है। किंतु लम्बे समय से यह ज्ञात रहा है कि डीएनए अन्य आकृतियों में भी पाया जाता है, यह और बात है कि मानव कोशिकाओं में ऐसे किसी अन्य रूप का संसूचन अभी तक नहीं हो पाया था। अब मानव कोशिकाओं में एक नई आकृति के डी एन ए की खोज का समाचार आया है। यह चार लड़ियों की एक गाँठ जैसी संरचना है जिसे आइ–मोटिफ नाम दिया गया है। वैज्ञानिकों को आइ–मोटिफ के विषय में पहले से जानकारी थी किंतु पहले यह केवल प्रयोगशाला के अन्दर ही देखने में आया था। आइ–मोटिफ संरचना पहली बार लगभग दो दशक पहले प्रयोगशालीय दशाओं में देखी गई थी जो बहुत अम्लीय थी और अधिकांश वैज्ञानिकों ने यह मान लिया था कि प्रकृति में आइ–मोटिफ कभी देखने में नहीं आएगा। तथापि, हाल ही के वर्षों में अध्ययनों से यह संकेत मिलने लगे थे कि यह अनोखा डीएनए जीवित मानव कोशिकाओं में विद्यमान हो सकता है। गार्वान इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल रिसर्च, सिडनी, ऑस्ट्रेलिया के किंगहोर्न सेंटर ऑफ क्लिनिकल जीनोमिक्स के अध्यक्ष मार्सेल डिंगर के नेतृत्व में किये गए एक नये अध्ययन में पहली बार यह प्रमाण मिला है कि न केवल यह संरचना विद्यमान है वरन् हमारे जीनों के नियमन में इसकी अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका होती है। (नेचर केमिस्ट्री, 23 अप्रैल 2018/ DOI : 10.1038/-41557-018-0046-3)

अंवेषकों के अनुसार आई–मोटिफ कुछ इस प्रकार निर्मित होता है: डीएनए की दोहरी कुंडली के एक छोटे खण्ड को कल्पना मे लाइए जहाँ दो मुख्य लड़ियों को संयुजित करने वाले हाइड्रोजन बंध अलग हो जाते हैं जबकि कुंडली का घुनाव अचानक खुल जाता है। यदि एक लड़ी में भरपूर सायटोसिन (डीएनए का निर्माण करने वाले चार प्रमुख न्यूक्लिय अम्लों में एक) हों तो यह बंधे हुए जूते के फीते की तरह बाहर की ओर लूप बना लेगी और हाइड्रोजन बंध स्वयं इस लूप के भीतर निर्मित होंगे जिससे ये सायटोसिन एक दूसरे के साथ बंधित हो जाएँगे। (जबकि दोहरी कुंडली में ऐसा सामान्यतः गुवेनिन के साथ होता है)। इस प्रकार, वे अनिवार्यतः एक ऐसा मंच बना लेंगे जिसमें प्रत्येक बंध संगत युग्म के लंबवत् होगा।

इन आई–मोटिफो की मानव डीएनए में उपस्थिति सुनिश्चित करने तथा उनकी अवस्थिति को ठीक–ठीक जानने के लिए सिडनी दल ने आइ–मोटिफ संरचना के साथ बंधित होने की क्षमता युक्त प्रतिपिंड अणु का एक विशिष्ट खंड निर्मित किया। इसके बाद उन्होंने सूक्ष्मदर्शी के नीचे प्रतिपिंड अणुओं को उजागर करने के लिए स्फुरदीप्ति तकनीक का उपयोग किया। इस अध्ययन ने दर्शाया कि आई–मोटिफ सचमुच प्रकृति में निर्मित हो सकते हैं। अध्ययन में अन्वेषकों ने पाया कि आइ–मोटिफ जीन प्रोन्नतिकारी क्षेत्रों तथा टेलोमियर में विद्यमान होते हैं जो यह इंगित करता है कि वे जीनोम का नियमन करते हैं।

अन्वेषकों द्वारा प्रेक्षित किया गया आइ–मोटिफ का एक अनन्य अभिलक्षण यह था कि उनकी वलित आकृति स्थाई नहीं थी, वे बारंबार वलित अवलित होते रहते हैं। विशेष रूप से अन्वेषकों ने पाया कि अभिलेखन के एक विशिष्ट चरण में – जब जीनों का प्रोटीनों में रूपांतरण शुरू होता है – अर्थात जब डीएनए सक्रिय अभिलेखन शुरू करता है, तब डीएनए उच्चतर दर पर आइ–मोटिफ में वलयित होता है। बाद में डीएनए फिर से अपने सामान्य रूप में अवलयित हो जाता है तथा आइ–मोटिफ गायब हो जाता है। डिंगर के अनुसार, संभवतः इसका अर्थ यह है कि आइ–मोटिफ, अभिलेखन प्रक्रम के नियमन में अतिविशिष्ट भूमिका अदा करते हैं।

किंतु, ऐसे कुछ क्षेत्रों की पहचान के बावजूद जिनमें वलयन प्रक्रम घटित होता है, अन्वेषक अभी तक यह नही जान पाए हैं कि यह वलय किन जीनों को नियंत्रित करते हैं और यदि आप कोशिकाओं को

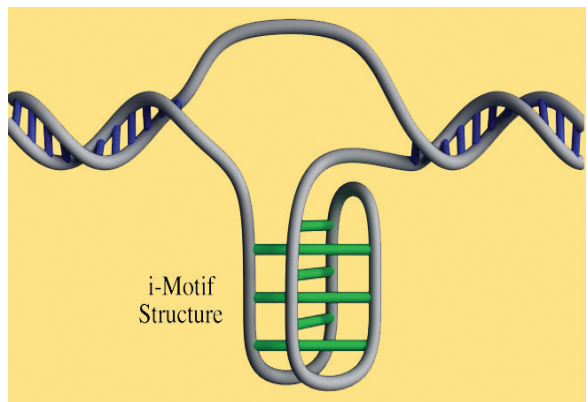

आई–मोटिफ डी एन ए संरचना (श्रेय : गार्वान इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल रिसर्च)

विक्षुब्ध करके इन संरचनाओं का बनना रोक देते हैं तो क्या होता है। स्पष्ट कि आइ–मोटिफ क्या हैं, वे कैसे कार्य करते हैं, उनका अस्तित्व किस लिए है और हम उनकी शक्तियों को कैसे उपयोग में लाएं, यह सब जानने के लिए अभी वर्षों या हो सकता है दशकों तक अनुसरणकारी अनुसंधान की आवश्यकता होगी।

(अनुवादः श्री रामशरण दास) ■